Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मणिपुरी नर्तन

दर्शना झवेरी

कलावती देवी

चौखम्भा-ओरियन्टालिया

प्राच्यविद्या एवं दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशक तथा विक्रेता

वाराणसी दिल्ली

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

विवरण पत्र

१. पुस्तक का नाम — मणिपुरी नर्तन

२. लेखक का नाम (1) दर्शना झवेरी
(2) कलावती देवी.

३. पुस्तक का विषय मणिपुरी नृत्य का शास्त्रीय अध्ययन
(विविध विषय)

४. प्रकाशक का नाम व पता
चौखम्भा ओरियंटालिया
पो० बा० 32
वाराणसी.

५. लेखक का प्रमाण पत्र— संलग्न है

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

President
Dr. Ashutosh Bhattacharjee
Director
Guru Bipin Singh
Secretary
Darshana Jhaveri
Secretary-Cum-Treasurer
Kalavati Devi

MANIPURI NARTANALAYA

हम प्रमाणित करती हैं कि हमारे द्वारा
रचित "मणिपुरी नर्तन" का प्रकाशन
वर्ष १९७८ में हुआ है।

दर्शना जवेरी
लेखिका का हस्ताक्षर

दिनांक - २१-१-८०

पूरा पता- १५ ए, बिपिन पाल रोड,
कलकत्ता-७०००२६.
टेलि- ४६-५९२२.

15/A, Bipin Pal Road, Calcutta-700026. Phone ~~466945~~ 465922

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

President
Dr. Ashutosh Bhattacharjee
Director
Guru Bipin Singh
Secretary
Darshana Jhaveri
Secretary-Cum-Treasurer
Kalavati Devi

MANIPURI NARTANALAYA

हम प्रमाणित करती हैं कि हमारे द्वारा रचित "मणिपुरी नर्तन" का प्रकाशन वर्ष १९७८ में हुआ है।

कलावती देवी
लेखिका का हस्ताक्षर

दिनांक - २१-१-८०

पुरा पता:- १५ ए, बिपिन पाल रोड,
कलकत्ता - ७०० ०२६.
टेलि - ४६-५९२२

15/A, Bipin Pal Road, Calcutta-700026. Phone 466945
465922

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो० बी० एन० पुरी
संग्रह
लखनऊ

State Museum Library
7159
Lucknow

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

॥ श्रीः ॥

जड़ावकुँवर राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला

१२

मणिपुरी नर्तन

लेखिका

दर्शना झवेरी

कलावती देवी

प्रास्ताविक

डॉ० हरेकृष्ण मुखोपाध्याय

भूमिका

डॉ० कपिला वात्स्यायन

उपाध्यक्षा, संगीत नाटक अकादमी

एवं

संयुक्त शिक्षा सलाहकार, शिक्षा मन्त्रालय,

भारत सरकार

चौखम्भा ओरियन्टालिया

प्राच्यविद्या एवं दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशक एवं विक्रेता

वाराणसी दिल्ली

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रकाशक
चौखम्भा ओरियन्टालिया
पो० आ० चौखम्भा, पो० बाक्स नं० ३२
गोकुल भवन, के. ३७/१०९, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी–२२१००१ (भारत)
टेलीफोन : ६३०२२ टेलीग्राम : गोकुलोत्सव
शाखा—बंगलो रोड, ९ यू० बी० जवाहर नगर
दिल्ली–११०००७

रेखाचित्र—मुखपृष्ठ : जितेन्द्र नाथ
अन्य : ललना लाखाणीं

© चौखम्भा ओरियन्टालिया

प्रथम संस्करण १९७८

मूल्य रु० १५–००

अन्य प्राप्तिस्थान
चौखम्भा विश्वभारती
पो० बाक्स नं० १३९
चौक (चित्रा सिनेमा के सामने)
वाराणसी
फोन : ६५४४४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

JADAUKUNWAR RASTRABHASHA SERIES
NO. 12

MAṆIPURĪ NARTANA

(MAṆIPURĪ DANCE)

प्रो० बी० एन० पुरी
संग्रह
लखनऊ

By

DARŚANĀ JHAVERĪ

KALĀVATĪ DEVĪ

Foreword by

Dr. HAREKṚṢṆA MUKHOPĀDHYĀYA

State Museum Library
7159
Lucknow

Introduction by

Dr. KAPILĀ VĀTSYĀYANA

Vice-Chairman, Saṅgīta Nāṭaka Akademy &
Jt. Educational Adviser, Ministry of Education,
Govt. of India.

CHAUKHAMBHA ORIENTALIA

A House of Oriental and Antiquarian Books

VARAṆASI DELHI

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Publishers

CHAUKHAMBHA ORIENTALIA
P. O. Chaukhambha, Post Box No. 32
Gokul Bhawan, K. 37/109, Gopal Mandir Lane
VARANASI–221001 (India)
Telephone : 63022 Telegram : Gokulotsav

Branch—Bungalow Road, 9 U. B. Jawahar Nagar
DELHI–110007

Drawings

Cover — Jitendra Nātha

Others — Lalanā Lākhāṇī

© *Chaukhambha Orientalia*

First Edition 1978

Price Rs. 15–00

Printers—Vidya Vilas Press, Varanasi

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

परमपूज्य गुरु

श्री बिपिनसिंह जी

के

कर कमलों

में

श्रद्धादरपूर्वक

समर्पित

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

विशेषज्ञ विचार

[१]

श्रीमती कलावती देवी और दर्शना झवेरी, इन दोनों का लिखा हुआ 'मणिपुरी नर्तन' नामक ग्रन्थ मैंने पढ़ा। इस पुस्तक में मणिपुरी नृत्य के अन्तर्गत रासलीला, गोष्ठलीला, दामोदर रास इत्यादि उपयोगी और आवश्यक नृत्य की कथा और भाव गुरुओं के मतानुसार पूर्णरूप से लिखा है। इस पुस्तक में नृत्य के ताल, लय, रस इत्यादि सुन्दरता के साथ अङ्कित हुए हैं। सिर्फ इतना ही नहीं, किन्तु मणिपुरी धर्म, इतिहास, मण्डप की उपवेशन प्रणाली इत्यादि अनेक विषय सुन्दरता के साथ वर्णित हैं। यह पुस्तक छोटी होने पर भी कला-विद्या के क्षेत्र में अत्यन्त प्रयोजनीय एवं छात्रों के लिये (मणिपुर से इतर) सुविधाजनक होगी, ऐसी मैं आशा करता हूँ।

थौनाउजम् कुञ्जकिशोर सिंह
नाट्य विशारद
मणिपुरी साहित्य परिषद्
मणिपुर स्टेट अकादमी कला यात्रा दल के सदस्य
१९७५ में पुरस्कृत
गोविंदजी मन्दिर की (गोष्ठलीला में) नन्द की
भूमिका करने वाले

दिनांक २–१२–७५
इम्फाल

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

'मणिपुरी नर्तन' नामक मणिपुरी नृत्यविषयक पुस्तक पढ़कर मेरा हृदय आनन्द परिप्लुत हुआ है। इस पुस्तक में मणिपुर की चिर प्रचलित प्रथा को अक्षुण्ण रखते हुए भूलत्रुटिविरहित धर्म, इतिहास, लाई हराबबा, रास, उलूखल, नटपाला और तालल‌यादि का सूक्ष्म विचारपूर्वक निर्देशन हुआ है। इसके अलावा मण्डपस्थ सभा सन्निवेश का भी वर्णन है। इसमें सुन्दर रीति से मणिपुरी नृत्य और सामाजिक प्रथा का वर्णन किया गया है। मणिपुरी दक्ष शिल्पिद्वय, दर्शना झवेरी और कलावती देवी, मणिपुर का नाम उज्ज्वल करने के लिये विभिन्न भाषाओं में और भी पुस्तकें प्रकाशित करें, यही मेरी आन्तरिक इच्छा है। इसके लिये मैं उनको प्रेरणा और उत्साह देता हूँ। गोविन्दजी तुम दोनों की सर्वदा रक्षा करें।

पाका सिंह
विजिटिंग प्रोफेसर
स्नातकोत्तर विभाग
जवाहरलाल नेहरू मणिपुरी डान्स अकादमी,
इम्फाल, मणिपुर

दिनांक २-१२-७५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

'मणिपुरी नर्तन' नाम की मणिपुरी नृत्य विषयक पुस्तक देखकर अत्यन्त आनन्द हुआ। इसमें मणिपुरी समाज और परम्परा के अनुसार धर्म, इतिहास, लाई हरावबा, रास, राखालरास, उलूखल, नटपाला, ताल, लय इत्यादि का सूक्ष्म रीति से विश्लेषण दिया गया है। इस पुस्तक को शुरु से अन्त तक मैंने विचार पूर्वक देखा है। यह पुस्तक शिक्षार्थियों को और कला जिज्ञासुओं को अत्यन्त उपयोगी होगी, ऐसा मैं विश्वास करती हूँ। इस कला को जिन्होंने जगत में प्रसिद्ध किया, एवं मणिपुरी नृत्य में तनमन विसर्जित किया और भारत तथा शेष विश्व में मणिपुरी नृत्य का प्रचार किया, उस दर्शना झवेरी और कलावती देवी को मैं आशीर्वाद देती हूँ। और इसी तरह बहु संग्रह और गवेषणापूर्वक पूर्णरीति से अनेक पुस्तकें प्रकाशित कर देश सेवा में अग्रसर रहें, ऐसी मैं श्री गोविन्दजी के चरण में प्रार्थना करती हूँ।

के० तोम्बी देवी
(सङ्गीत नाटक अकादमी से पुरस्कृत)
इम्फाल, मणिपुर

दिनांक २४–११–७५

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

[४]

'मणिपुरी नर्तन' नामक यह पुस्तक अच्छी तरह मैंने पढ़ी है। मणिपुरी समाज का धर्म और नृत्य की गति भङ्गी, इतिहास, लाई हराववा, नटपाला, रासलीला, गोपरास, उलूखल एवं ताल, लय इत्यादि के सम्बन्ध में सरल भाषा में लिखकर, मणिपुरी नृत्य का गौरव बढ़ानेवाली तथा मणिपुरी नृत्य में ख्याति प्राप्त करनेवाली दर्शना झवेरी तथा कलावती देवी इस कला भगिनीद्वय की मैं भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ। यह किताब मानक बने, ऐसी मैं कामना करता हूँ।

लोकेश्वरसिंह

दिनांक २२–११–७५

रासनृत्य के प्रधानाचार्य, जवाहरलाल नेहरू
मणिपुरी डान्स अकादमी, इम्फाल, मणिपुर

[५]

'मणिपुरी नर्तन' नामक पुस्तक पर मैंने सूक्ष्म रीति से सोच-विचार किया है। मणिपुरी समाज का इतिहास और धर्म एवं दोष विहीन मणिपुर का नटपाला और रासान्तर्गत कुञ्जरास, महारास, वसन्तरास, राखाल रास और उलूखल रास इनके क्रम का सौन्दर्य एवं मण्डप संबंधी रचना, तदीय कार्यकलाप एवं मणिपुर के वैष्णव साहित्य के रसादि को सुगम भाषा में लिखकर मणिपुर के रास की गुणावली प्रकाशित किया है। मणिपुरी नृत्य-जगत् में ख्यातनाम कु० दर्शना झवेरी और कलावती देवी को मैं आशीर्वाद देता हूँ। मणिपुरी नर्तन पुस्तक में श्री श्री गोविन्दजी ने योग्य आलोकदान किया है इसलिये गोविन्दजी के चरण में मैं प्रणाम करता हूँ।

इबोपिषक शर्मा

दिनांक २२–११–७५

श्री श्रीगोविन्दजी के रासधारी और
श्री गोविन्दजी नर्तनालय के अध्यक्ष

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रास्ताविक

कर्तव्य के कठोर आह्वान से नन्दनन्दन को मथुरा यात्रा करनी पड़ी। अवतार ग्रहण का हेतु धर्मसंस्थापन उनका अन्यतम उद्देश्य था। आत्मसुख सर्वस्व भगवान का यह उद्देश्य अत्याचारी कंस का विनाश किये बिना सफल नहीं हो सकता था।

श्रीकृष्ण के मथुरागमन से सम्पूर्ण श्रीवृन्दावन, माता यशोदा, पिता नन्द और श्रीदामादि सकल सुहृद्वृन्द शोकाकुल हुए। प्राणान्तिक वेदनाप्रद श्रीकृष्ण विरह से सखीवर्ग के सहित श्रीमती राधिका अत्यधिक व्याकुल हुईं। कालिन्दी के उस पार वृन्दावन, इस पार मथुरा, किन्तु विरहिणी के मन में मथुरा जाकर श्रीकृष्ण दर्शन का संकल्प किसी भी दिन स्वप्न में भी नहीं होता था।

एक दिन अकस्मात् वार्ता पहुँची कि सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में स्नान के लिये जनक-जननी के साथ द्वारकाधीश आये हैं। तब सर्व वृन्दावन आनन्द परिप्लुत हो गया। पिता नन्द, जननी यशोमती, राखालगण इत्यादि ने कुरुक्षेत्र की यात्रा की। राधारानी ने भी कुरुक्षेत्र प्रयाण किया।

किन्तु यह क्या? वह कालिन्दी कहाँ है? उसके तटवर्ती कुञ्जकानन कहाँ हैं? कालिन्दी के सिर पर विराजमान वह नवीन नटवर कहाँ है?

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

हाथी, घोड़ा, रथ और परिकरों के परिवारसहित कृष्ण का राजवेश श्रीमती को तृप्त नहीं कर सका। जननी यशोदा, पिता नन्द, राखालगण कोई भी प्रसन्न नहीं हुए। सब लोगों ने शून्य मन से वृन्दावन प्रत्यागमन किया।

वृन्दावनवासियों में आनन्द उत्पन्न करने के लिये और विशेषकर श्रीमतीजी को आनन्द प्रदान करने के लिये ही नन्दनन्दन का वृन्दावन पुनरागमन हुआ। स्वर्णमय मणिमण्डित राजदण्ड का तथा हेमाञ्चित परिच्छद का त्याग करना पड़ा। पीताम्बर परिधान किया, पीतोत्तरीय धारण किया और धेनुओं का आह्वान करनेवाले मोहन ने वेणुदण्ड ग्रहण किया। वसन्तरास आरम्भ हुआ। महाकवि जयदेव ने इसी वासन्ती रास का वर्णन किया है। यही वासन्तीरास राधा के प्रेम का विजयध्वज है।

श्रीव्यास प्रणीत भागवत में शुकमुख से जो वर्णित है वह शारदरास है। उसमें वर्णन है कि एक गोपी को लेकर (राधिकाको) कृष्ण रासमण्डल से अन्तर्हित हुए। गोपियों का गर्वदमन और प्रसाद-दान, यही उनका उद्देश्य था। अन्त में उस गोपी के (राधा के) मन में भी अहंकार का प्रादुर्भाव हुआ, यह अनुभव करके उस श्रीमती गोपी को भी (राधिका को भी) मार्ग में त्यागकर श्रीकृष्ण अदृश्य हुए। श्रीमती राधा के अभिमान की कथा रहस्य भरी है। भगवान् को अपनी गलती याद आई कि श्रीमती राधाजी के अभाव में गोपियाँ किसके द्वारा मेरी प्राप्ति करेंगी ? सागरसंगम के उद्देश्य से जो स्रोतस्विनी यात्रा करती है, पथप्रदर्शक न मिलने से वही कल्लोलिनी बनकर रास्ता खो बैठती है और बालुकामय प्रदेश में जाने से उसे बाधा होती है। इसीलिये श्रीमती राधाजी को पथ प्रदर्शक रूप में संकल्पित करके उन्हें रास्ते में छोड़ गये। गोपियों को राधा का दर्शन हुआ और उसके साथ कृष्ण का गान करते-करते उन्होंने यात्रा की। अकस्मात् उनके बीच पीताम्बरधारी वनमाली साक्षात् मन्मथ नन्दनन्दन आविर्भूत हुए।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राधा-पारम्यवाद के सर्वश्रेष्ठ कवि जयदेव ने इससे विपरीत कथा कही है। सब गोपियों के पास श्रीकृष्ण को देखकर मानिनी राधा ने रासमण्डल का त्याग किया और श्रीकृष्ण ही उसके अन्वेषण में वन-वन रोकर ढूँढते रहे। वासन्ती रास, नित्यलीला और प्रकटलीला दोनों का एकत्र समाहार है। श्री गीतगोविन्द ग्रन्थकार ने उभयलीला का ही एकसाथ वर्णन किया है।

मैं कु० दर्शना और कलावती लिखित "मणिपुरी नर्तन" पढ़कर मुग्ध हुआ हूँ। इन लेखिकाद्वय में जैसा उदग्र कुतूहल और ऐकान्तिक अनुसन्धानशीलता है, वैसी ही रमणीय भाषा की परिपाटी एवं प्रकाशन-शैली भी।

तत्त्व और तथ्य के स्वरूप में सतर्क दृष्टि रखकर लेखिकाद्वय ने सिद्धान्त के विषय में सावधानता का परिचय दिया है।

यह पुस्तक केवल साहित्य के भण्डार को समृद्ध करेगी, इतना ही नहीं किन्तु भारत की संस्कृति और सभ्यता के इतिहास में अभिनव स्वरूप प्रकाशित करेगी। लेखिकाद्वय का इस एक पुस्तक से ही साहित्य में अविस्मरणीय स्थान रहेगा। उनका निरामय दीर्घ जीवन ऐसी ही रचनाओं के निर्माण में निमग्न रहे और उनकी अक्लान्त लेखनी इसी प्रकार नव-नव अवदान से भावी उत्तराधिकारियों को ऋणी करे।

मैं इस पुस्तक के सर्वातिशायी प्रचार की कामना करता हूँ। यह सौभाग्य की बात है कि मेरा मणिपुर के अन्यतम नृत्य शिल्पी, मनीषी, वैष्णव गुरु बिपिनसिंहजी से परिचय हुआ। मेरा सौभाग्य है कि उनके ही सौजन्य से झवेरी भगिनियों का और कलावती के नृत्य-दर्शन का सुयोग प्राप्त हुआ।

श्रीभगवान् उन सबको कल्याण प्रदान करें।

आशीर्वादक

हरेकृष्ण मुखोपाध्याय

कूडामीठा

बीरभूमि

१७ वैशाख १३८३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

भूमिका

मणिपुरी नृत्य का नाम लेते ही उस सुन्दर प्रदेश की झलक मन में आती है जहाँ राधा और कृष्ण सदैव नर्तन करते हैं और अनुपम प्रकृति के वातावरण में उनका रास आज भी जीवित है।

किन्तु बहुत कम लोग यह जानते हैं कि इस नृत्य की पृष्ठभूमि में एक बहुत प्राचीन इतिहास छिपा हुआ है जिसका महत्त्व संपूर्ण भारतवर्ष के लिये है और जो कि इस प्रदेश के संदर्भ में और उसमें नहीं अपितु विस्तरित संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है।

दर्शना झवेरी और उनके समस्त परिवार का इस प्रदेश के साथ एक रागात्मक सम्बन्ध रहा है। इसके फलस्वरूप उन्होंने इस प्रदेश की नृत्य शैलियों का गंभीर अध्ययन किया है और इससे अधिक वहाँ की भावनाओं को सुरक्षित रखा है। यह पुस्तक साधना की अभिव्यक्ति है जो कि कला के ऊपरी स्तर से उसके अनेक गहरे पहलू तक ले जाती है।

बहुत सहज ढंग से दर्शना झवेरी ने मणिपुर के इतिहास पर प्रकाश डाला है और पुस्तक के पहले भाग में सांस्कृतिक परिवेश स्पष्ट हो जाता है। लाई हराबबा और अनेक नृत्य मणिपुरी नृत्य के अभिन्न अङ्ग हैं और इसी पृष्ठभूमि में जगोई का विकास हुआ है। दर्शना झवेरी ने बहुत जटिल समस्याओं का समाधान करने का प्रयत्न किया है।

दूसरे भाग में वह मणिपुरी नृत्य के संगीत, ताल और अंग-संचालन का विश्लेषण करती हैं। यह भाग मुख्यतः उनके नृत्यगुरु श्री विपिन सिंह

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

की नृत्य शैली पर आधारित है। बहुत से शिष्य जो इस नृत्य शैली का अध्ययन करते हैं वे संगीत और ताल के पक्ष से परिचित नहीं होते। यह भाग उन सब छात्राओं के लिए लाभदायक होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

मणिपुरी नृत्य के प्रचार में बहुत से गुरुओं ने योगदान दिया है इनमें से कुछ उसी प्रदेश के कलाकार थे जैसे मेरे श्रद्धेय गुरु आमौबी सिंह; साथ ही भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों के कलाकार भी इस नृत्य के प्रति आकर्षित हुए और इसकी सुन्दरता और भक्ति-भावना को वे देश-प्रदेश में ले गये। दूर बम्बई से झवेरी परिवार ने इस कार्य में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। यह पुस्तक उसी निष्ठा का प्रतीक है और मुझे आशा है कि इस पुस्तक से भविष्य के लिए दिशा भी मिलेगी और हिन्दी में और पुस्तकें लिखी जायेंगी।

श्रीकृष्णजन्माष्टमी
सं० २०३५
दि० २५–८–७८

कपिला वात्स्यायन

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

निवेदन

अति प्राचीन काल से मणिपुरी नर्तन का भण्डार बढ़ता आया है। सागर की तरह अति विशाल विषय को इस छोटी-सी पुस्तक में समाविष्ट करना गागर में सागर भरना है। बहुत समय से मणिपुरी नर्तन के शिक्षार्थियों को ज्ञान देने वाली, प्रामाणिक और पारम्परिक पुस्तक न होने से उन्हें बहुत कष्ट होता था। इसलिये इस पुस्तक में मणिपुरी नर्तन के मुख्यतः रास विषय को लेकर नूतन शिक्षार्थियों को साधारण ज्ञान प्राप्त हो, ऐसा प्रयत्न किया गया है। भविष्य में नर्तन के एक-एक अङ्गोपाङ्गों पर सूक्ष्म रीति से विचार कर पुस्तक प्रकाशित करने का विचार है।

हम नृत्यकार हैं लेखिकाएँ नहीं, इसलिये लेखन की त्रुटियाँ होने की संभावना है। सहृदय पाठक हमें क्षमा करेंगे।

मणिपुरी नृत्यसंबंधी अब तक उपलब्ध पुस्तकों की ग्रन्थ-रचना में सहायता ली गई है। मणिपुरी स्टेट कला अकादमी के सेमिनार में प्रकीर्ण विषयों पर पढ़े गये प्रबन्धों का भी उपयोग किया गया है। पण्डित और कलाकार वर्ग से प्रार्थना है कि इस पुस्तक में जो प्रामादिक और अज्ञानजन्य दोष दृष्टिपथ में आवें, उसपर हमलोगों का ध्यान आकृष्ट करें। दूसरी आवृत्ति के समय उसका विचार अवश्य होगा।

पुस्तक के लिखने में हमारे परमपूज्य गुरु श्री बिपिनसिंह जी की प्रेरणा ही प्रवर्तक हुई है। उनके आग्रह, आदेश और प्रेरणा के बिना पुस्तक लिखना असम्भव था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सन् १९७१ में मणिपुरी नर्तन ग्रंथ बांग्ला भाषा में मणिपुरी नर्तनालय द्वारा प्रकाशित हुआ। अध्येताओं ने ग्रंथ का उत्साहवर्धक स्वागत किया। हिन्दी में ऐसी रचना का अभाव व्यक्त किया गया जिसका परिणाम आपके हाथ में है। इसमें उपलब्ध अधुनातन सामग्री का समावेश है तथा उसका नवीन विन्यास भी। वस्तु को अधिक ग्राह्य और गोचर बनाने के लिए चित्र दिए गए हैं।

ग्रंथ रचना में श्री गजानन शास्त्री रानाडे ने उदारतापूर्वक सहायता प्रदान की है। तदर्थ हम उनके कृतज्ञ हैं।

वैष्णव साहित्य के असाधारण पण्डित, वैष्णव धर्म के निष्ठावंत भक्त, एवं मणिपुरी नृत्य के प्रेमी डॉ० हरेकृष्ण मुखोपाध्याय साहित्यरत्न ने इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखकर हम लोगों को चिरकृतज्ञ बनाया है।

मणिपुरी नृत्य की महान् आशंसिका तथा उन्नायिका, लब्धप्रतिष्ठ नृत्य विदुषी एवं लेखिका डॉ० कपिला वात्स्यायन की हम अत्यन्त ऋणी हैं जिन्होंने इस लघु प्रयास की भूमिका लिखकर इसे महिमामण्डित किया है।

हिन्दी में यह पुस्तक प्रकाशित करने के लिए प्रसिद्ध प्रकाशक चौखम्भा ओरियन्टालिया, वाराणसी ने सहर्ष भारवहन किया है, इसके लिये हम उनके ऋणी हैं।

यह पुस्तक पढ़कर मणिपुरी नर्तन के जिज्ञासुओं की प्रवृत्ति और भी तलस्पर्शी ज्ञान के लिये हो तो हम अपना प्रयत्न सफल समझेंगी।

मणिपुरी नर्तनालय
१५, ए० बिपिन पाल रोड
कलकत्ता-७०००२६
श्रीकृष्णजन्माष्टमी, सं २०३५
दिनांक २४-८-७८

निवेदिका
दर्शना झवेरी और कलावती देवी

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

विषय विधान

विशेषज्ञ विचार	...	...	७–१०
प्रास्ताविक	...	...	११
भूमिका	...	...	१५
१ मणिपुर के सामाजिक जीवन पर धर्म और नृत्य का प्रभाव			३
२ मणिपुरी मर्तन का इतिहास	...	...	७
३ मणिपुरी नृत्यगीत में पौराणिक लोककथाओं का स्थान		...	११
४ लाई हरावबा	...	...	१४
५ नटपाला	...	...	१८
६ रासलीला	...	...	२०
७ गोपरास (शन्शेबा)	...	...	२९
८ मणिपुर की प्राचीन अध्यापन-पद्धति	...	...	३४
९ रूपक–उपरूपक	...	...	३६
१० मण्डप की उपवेशनादि प्रणाली	...	...	४१
११ मणिपुरी वैष्णव साहित्य में रस और नायक-नायिका		...	४३
१२ उत्सवादि में नृत्यानुष्ठान	...	...	५५
१३ जगोई	...	...	५७
१४ थाली	...	...	६१
१५ भंगी परेंग	...	...	६३
१६ ताक	...	...	६७

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७ मणिपुर में प्रचलित कुछ ताल ६८

१८ गीत ७२

१९ प्रबन्ध ७३

२० खुत्लोन ७५

२१ शाजत् ८०

२२ मणिपुर में प्रचलित वाद्य ८१

२३ पारिभाषिक शब्द ८४

मैतेई—पुङ्ग, ताल, राजमेल, नर्तन तथा गीतादि विषयक ...

संस्कृत—नर्तन-विषयक ... ...

२४ रासकालीन वेशभूषा ९६

२५ गुरुपरम्परा १०३

२६ मणिपुरी रासनर्तन के कुछ गुरु १०५

२७ मणिपुरी नृत्यगीत सम्बन्धी सहायक ग्रन्थ सूची ... ११३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मणिपुरी नर्तन

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१. मणिपुर के सामाजिक जीवन पर धर्म और नृत्य का प्रभाव

मणिपुर भारत के उत्तरपूर्व में ६ पर्वतमालाओं से वलयित एक प्रदेश है। चारों तरफ वायु से लहराते हुए धान के खेत तथा वंशवनराजियाँ हैं। उनके सिर वायु से हिलने पर हरे-हरे तरङ्ग से उमड़ते हैं, ऐसा लगता है। दर्शन मात्र से मन प्रसन्न होता है। समुद्र तल से २६००[1] फुट ऊँचाई पर यह प्रदेश है। इसके उत्तर में नागालैण्ड, पश्चिम में आसाम का काछाड़ जिला, दक्षिण में मिजोराम तथा पूर्व में ब्रह्मदेश संलग्न हैं। भौगोलिक अवस्थान ने इस देश को सस्य सम्पन्न और फलफूलों से समृद्ध, अतएव मनोहर बनाया है। १९७१[2] की जनसंख्या गणना के अनुसार इस प्रदेश की जनसंख्या १०, ७२, ७५३ है। उसमें ढ़ाई[3] लाख नागा और कुकी सम्प्रदाय के आदिवासी हैं और शेष में ज्यादा हिन्दू हैं।

देश की सम्पन्नता के कारण वहाँ के सर्वसाधारण लोग सुखी, समृद्ध, शान्तिप्रिय, धार्मिक और कला प्रेमी हैं। वहाँ नृत्य और संगीत धर्मानुगामी होकर, जनजीवन के साथ एकरूप हो गया है। नाना प्रकार की दन्तकथाओं तथा पौराणिक कथाओं पर श्रद्धा होने से, नृत्य तथा गीत को नाना विषयों की उपलब्धियाँ और नाना प्रेरणाएँ मिली हैं। प्राचीन काल में जब उमंग लाई (वनदेवता), सेनामही (गृहदेवता) और पाखङ्ग्बा, (प्रथम शासक, राजा और देवता) इत्यादि धार्मिक देवताओं का प्राधान्य था तब से लाई हरावबा उत्सव में नृत्य करने का नियम आज तक प्रचलित है। बंगाल के चैतन्य महाप्रभु प्रणीत गौडीय वैष्णव सम्प्रदाय के मणिपुर में आगमन के बाद, कृष्णभक्तिरसान्वित धर्म का प्रचलन हुआ। तब से मणिपुर में वैष्णव

---

१. Economic Geography of Manipur by S. A. Ansari, p. 13.
२. Ibid, p. 1.
३. Ibid, p. 28.

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

धर्मीय अनुष्ठानों में नृत्यगीत महोत्सव और उसमें कृष्ण की जीवन लीलाओं का अनुकरण होने लगा।

आज तक इस नियम ने मणिपुर की जीवन-धारा तथा संस्कृति को उत्तरोत्तर अधिक समृद्धिशाली बनाया है। हर एक सामाजिक उत्सव नृत्य-गीतादि के द्वारा सम्पन्न किया जाता है।

मणिपुर निवासी जन्म से ही कलात्मक वातावरण में बड़े होते हैं। इस देश के कोने-कोने में कलावंत, कलाकार और गुरु व्याप्त हैं।

नगर के उपविभागों में विद्यमान मन्दिरों के प्राङ्गणों में विविध धार्मिक अनुष्ठानों के प्रसंग में तत्तत्प्रसङ्गानुरूप नृत्यगीतादि होते हैं। रासलीला में राधाकृष्ण की प्रणय लीला साकार की जाती है। समाज में धर्म के साथ नृत्य का इतना समन्वय है कि यदि कोई बालक अस्वस्थ हो तो उसके माता-पिता उसके स्वास्थ्य के लिये राधाकृष्ण की भूमिका में उससे नृत्य कराएँगें, ऐसी मिन्नतें करते हैं।

मणिपुर में धर्म और कला का सर्वश्रेष्ठ निदर्शन है रासलीला। दर्शकगण सारी रात इस लीला का दर्शन करके रसाप्लुत होकर स्वयं अपने को धन्य मानते हैं। वे लोग राधाकृष्ण के पात्रों को प्रत्यक्ष भगवान् मानकर साष्टांग प्रणाम करके आनन्दाश्रुओं से परिप्लुत होकर अपूर्व भावाविष्कार करते हैं। रासलीला तथा संकीर्तन में जब कलावन्त, समय विशेष में स्वकीय कला का अद्‌भुत प्रदर्शन करते हैं, तब रसिक प्रेक्षक वृन्द वस्त्रालंकारादि समर्पण करके प्रणाम करते हैं। इस प्रकार कला को धार्मिक अङ्ग मानकर संस्कृति और कला का संवर्धन करते हैं।

कला के लिये अनेक गुरुओं ने और कलाकारों ने अपना संपूर्ण जीवन समर्पित किया है। मणिपुर के समाज में गुरु लोगों का स्थान सर्वाधिक सम्माननीय है। इस देश में शिल्पानुरागी समाज ने कला को देवताराधन का उपकरण बनाकर उसकी महनीयता बढ़ाई है।

समाज में नाना धार्मिक विधिविधान और कलाओं का तदङ्गत्वेन व्यवस्थापन का अधिष्ठाता राजा ही होता है। अति प्राचीन काल से मणिपुर के राजवंश ने गुरु और कलाकारों को नाना उपाधि और उपहार देकर प्रतिष्ठित और प्रोत्साहित किया है। यह समाज धर्म से प्रभावित है जिसके कारण उसमें नृत्य और तदङ्गभूत कलाएँ भी धर्म का ही अङ्ग बन

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

गई हैं। वैष्णव धर्म भक्ति प्रधान होने से इस नृत्य में सहजता, कोमलता, मर्यादा, विनय इत्यादि गुण भी समन्वित हैं। इसलिये औद्धत्य और मर्यादातिक्रमण इस नृत्य में निषिद्ध है।

प्राचीन सेनामही धर्म के नोंगपोक निंग्थौ, और पान्थोईबी (ये दोनों प्रायः शिव पार्वती के अवतार हैं, ऐसी मान्यता है) तथा वैष्णव धर्म के राधाकृष्ण, इन दोनों में परकीया प्रेम का वैशिष्ट्य होने से, ये दोनों सम्प्रदाय मणिपुर के जीवन में परस्पर परिपूरक रूप में समान गति से प्रवाहित हो गये, और नृत्य गीत का प्राधान्य उभयत्र प्रथम से ही प्रचलित है। इसी से समाज में धर्म और कला परस्परात्मकता के कारण जैसे अभिन्नता विद्यमान है।

मणिपुर में समाज, धर्म और नृत्य, इनकी परस्परात्मकता की प्रतिष्ठा जिस सम्प्रदाय ने (प्रतिष्ठान, संस्थान) की उसको मैतेई भाषा में 'लोयसांग' कहते हैं। वैष्णव धर्मावलम्बी राजाओं ने, समाज और राज्य के सम्यक् परिपालन के लिये, लोयसांग की सुन्दर परम्परा निर्मित की। इस लोयसांग नामक प्रतिष्ठान में राजा को धर्म शासन और नृत्यगीत के अधिष्ठाता के रूप में स्वीकृत किया जाता है। प्रत्येक विभाग का अलग-अलग लोयसांग होता है। जैसे माईबा लोयसांग, पाला लोयसांग, ब्रह्म सभा इत्यादि। प्रत्येक विषय में निष्णात और सिद्धहस्त व्यक्तियों को राजा लोयसांग में नियुक्त करते हैं।

प्रत्येक लोयसांग अपने-अपने क्षेत्र में विचार द्वारा राज्य के जन-जन को न्यायपथ पर अधिष्ठित करके जनसेवा करता है। जैसे पाला लोयसांग में 'हिदांग, हंजाबा, जयपत्र' इत्यादि उपाधियाँ प्रसिद्ध हैं। लोयसांग के घटक सभासदों का निर्णय सर्वमान्य होता है।

इसके उदाहरण में धर्म तथा नृत्यविषयक कुछ लोयसांगों का उल्लेख करते हैं।

माईबा लोयसांग

प्राचीन सेनामही, पाखङ्बा, उमंगलाई इत्यादि देवता सम्बन्धी धार्मिक रीति, नीति को जनता में सुचारु रूप से चलाने के लिये यह लोयसांग कार्य-प्रवृत्त रहता है। इसके सभ्य हैं माईबा (पुरुष पुरोहित), माईबी (पुरुष और स्त्री देवदासी) और मैतेई पुराणज्ञ पण्डित वर्ग।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

जहाँ-जहाँ लाई हरावबा उत्सव होता है, वहाँ-वहाँ माईबा और माईबीगण प्रधान रूप से भाग लेते हैं। राज्य का प्रतिदिन का इतिवृत्त लिखने का काम, इसी पण्डितगण का रहता है। प्राचीन धर्म की रीति-नीति का यही लोयसांग धारक, वाहक और विचारक है।

पाला लोयसांग

राजा नृत्य-गीत-वाद्य इत्यादि में निष्णात, वैष्णवधर्मीय गुरुओं को गोविन्दजी की वार्षिक और तत्तत्कालीन दैनंदिन सेवा और उत्सवों का कार्य करने के लिये इस लोयसांग में नियुक्त करते हैं। नृत्यगीतादि के विषय में अगर किसी को अभियोग करना हो तो इस लोयसांग में करते हैं। लोयसांग के सभ्य उस पर साधक-बाधक विचार करते हैं। और अन्तिम निर्णय स्वयं राजा देते हैं।

ब्रह्मसभा

वैष्णव धर्मावलम्वी योग्य ब्राह्मण पण्डित लोग, इस लोयसांग के सभासद होते हैं। ये लोग वैष्णव धर्म सम्बन्धी शास्त्र तथा रीति-रिवाज और साहित्य की आलोचना करते हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२. मणिपुरी नर्तन का इतिहास

मणिपुरी नर्तन पारम्परिक है, लेकिन उसका प्राचीन इतिहास प्रमाण-पूर्वक उपलब्ध नहीं है। जो कुछ खण्डितशृङ्खला की तरह उपलब्ध है, वह अठारहवीं सदी के आरम्भ से है। क्योंकि १८ वीं सदी के राजा पाम्हैबा ने (गरीबनवाज ने) पूर्व के सब प्राचीन ग्रन्थ पुराण इत्यादि जला दिये।

ईसा पूर्व ५०० में शाक्यवंश का हिन्दू राजा ध्वजराज[१] था। उसके बाद ईसा ३३ में पाखङ्ग-बा[२] के समय पश्चिम से 'पोईरोईतोन[३] ने आकर आर्यसंस्कृति का प्रचार किया। ईसा १५४ में राजा खुओइ[४] तोम्पोक ने पुङ्ग चर्मवाद्य का आविष्कार किया। मणिपुर के राजा नाओ-थिंग्खोंग के समय में ईसा ७०७ में बर्मा के राजा कोहलोफेन्ग[५] ने बर्मा, मणिपुर और आसाम से नर्तनकारों तथा संगीतकारों का एक वृन्द चीन भेजा। आठवीं सदी के अन्त में राजा खोंगतेकचा[६] के समय का एक ताम्रलेख उपलब्ध है। उस लेख का आरम्भ 'श्री हरि' शब्द से हुआ है, जिससे श्री हरि सर्वश्रेष्ठ देवता है, ऐसा सूचित होता है। उसमें शिव तथा दुर्गा की पूजा का भी उल्लेख है। उसके बाद ईसा १४८४ में राजा कियाम्बा[७] के समय में बर्मा के पोंग के खेखोम्बा राजा ने मणिपुर से कुशल पुंग वादकों को (चर्म-वाद्य वादक) बुलाया और बर्मा से रणशिंगा (पेरे) वादकों को भेजा, ऐसा

---

१. Glimpses of Manipuri Language, Literature & Culture, p. 3, published by Manipuri Sahitya Parishad.

२. चैथारोल कुम्बाबा, पृष्ठ ६६१।

३. Glimpses of Manipuri Language, Literature & Culture, p. 3.

४. मणिपुर इतिहास—आर० के० सनाहल सिंह, पृष्ठ ७।

५. Background of Assamese Culture by R. M. Nath, p. 88.

६. Glimpses of Manipuri Language, Literature & Culture, p. 7.

७. History of Manipur by Jyotirmay Roy, p. 26.

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उल्लेख है। इस राजा ने कियाम्बा को विष्णुमूर्ति उपहार में दी थी। राजा ने मूर्ति प्रतिष्ठापित करके पूजा शुरू की। वह स्थान विष्णुपुर[1] नाम से प्रसिद्ध है। उसके बाद सत्रहवीं सदी में खागेम्बा[2] के समय में विष्णुपुर में मन्दिर बाँधा गया, जो अभी भी विद्यमान है। १६९८ में, चराईरंग्बा[3] ने मदनमोहन और राधा की मूर्तियाँ स्थापित कीं और गुरु अरिबम ब्राह्मणों से पूजा कराई, ऐसी प्रसिद्धि है। प्राचीन समय से प्राचीन धर्म से संबद्ध लाई हराववा उत्सव मणिपुर में समाज के साथ एक रूप हो गया है। किंतु वर्तमान समय में प्रचलित उत्सव का स्वरूप पहले कब से चालू हुआ, इस बात का निर्णायक उत्तर नहीं है। और पूर्वप्रचलित उत्सव का स्वरूप क्या था इसका भी कोई अनुमापक हेतु नहीं मिलता। ख्रिस्तपूर्व ५०० साल से जो खण्डित इतिहास उपलब्ध है, उससे उस समय कौनसा धर्म किस रूप में प्रचलित था, किस धर्म का प्राधान्य था, और उसके साथ कला का क्या संबंध और स्वरूप था, यह कहना कठिन है।

१८ वीं सदी के आरम्भ में राजा पाम्हैवा ने (गरीवनवाज ने[4]) शान्तिदास गोस्वामी से रामानन्दी धर्म अपनाया और उनकी आज्ञा से प्राचीन पुराण वगैरह ग्रन्थ जला दिये। गरीब नवाज के समय में बंगदेशपाला[5] रामानन्दी धर्म के साथ ही प्रवृत्त हुआ। इसलिये उसमें रामकीर्तन होता था, ऐसा मानते हैं। वर्तमान में राधा कृष्ण का कीर्तन प्रायः गाते है। कुछ लोगों का मत है कि चराईरंग्बा[6] के समय राधा-कृष्ण मूर्ति की स्थापना के बाद बंगला देश से जो कीर्तन मण्डली आई, उसने वङ्गीय कीर्तन का बीजारोपण किया और बंगदेश से ही यह पाला (वृन्द) आया, इसलिये उसका नाम बंगदेश पाला हुआ। मणिपुर में इसको अरिबापाला (प्राचीन कलाकारों का वृन्द) कहते हैं।

---

१. मणिपुर इतिहास—आर० के० सनाहल सिंह, पृष्ठ ३७।
मैतै कीर्तन—पं० आतम्बापु शर्मा, पृष्ठ १।
२. History of Manipur by Jyotirmay Roy, p. 31.
३. मणिपुर इतिहास—आर० के० सनाहल सिंह, पृष्ठ ४९।
४. History of Manipur by Jyotirmay Roy, p. 33.
५. मैतै कीर्तन—पं० आतम्बापु शर्मा, पृष्ठ २।
श्री श्री हरि संकीर्तन—के० धन सिंह, पृष्ठ २३।
६. J. N. Manipuri Dance Akademy Souvenir (1964), p. 56.

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७६३[1] में पाम्हैबा का पौत्र राजर्षि भाग्यचन्द्र (चिङ्थांग खोम्बा, जयसिंह, कर्ता महाराज) महाराजा हुआ। उसके समय में चैतन्य महाप्रभु के धर्म से अनुप्राणित जो नरोत्तम गोस्वामी के मतावलम्बी थे, उन्होंने मणिपुर आकर गौडीय (चैतन्य महाप्रभु से प्रतिष्ठापित) धर्म का प्रचार किया। स्वयं महाराजा ने उस धर्म की दीक्षा लेकर, इस धर्म को राजधर्म उद्घोषित करके, प्रजा द्वारा इसको स्वीकार करवाया। १७७९ में राजर्षि भाग्यचन्द्र ने स्वप्नादेश के अनुसार गोविन्द जी[2] की मूर्ति स्थापित की। स्वप्नादेशानुसार ही इस कलारसिक राजा ने गुरु तरवेन्चङ्बम् रसानन्द और गुरु ङाङ्बम स्वरूपानन्द के साहाय्य से पाँच दिन तक रासलीला करवाई। (किसी किसी के मत से कावोखुम्वोंग्वा ने भी साहाय्य किया)। उसमें उसकी पुत्री सीजालाईरोईबी (बिम्बावती मञ्जरी) ने राधा की भूमिका की। गोविद जी की मूर्ति संपूर्ण तैयार थी, राधा की मूर्ति अपूर्ण होने से उसके बदले बिम्बावती को राधा की भूमिका करनी पड़ी।

रासलीला की सुन्दर वेशभूषा का भी स्वरूप स्वप्नादेशानुसार ही प्रवर्तित किया। पहले विद्यमान बंगदेशपाला में नृत्य को प्राधान्य देकर संकीर्तन में जो नवविधान निर्माण किया, वह नटपाला[3] नाम से प्रचलित हुआ। परन्तु नटपाला में गान शैली भिन्न रूप से परिणत की गई। पुङ्गचलम (मृदङ्ग चलन) एवं करताल चलम (करतालचलन) इन दो सुन्दर नर्तन प्रकारों में सूक्ष्मातिसूक्ष्म पद्धति से विकास होने का सूत्रपात हो गया। अभी बंगदेशपाला को 'अरीबा पाला' (प्राचीन) और नटपाला को 'अनौबापाला' (नूतन) नाम से पुकारते हैं। इसी समय रासलीला में अचौबा भङ्गी परेंग जैसी सुन्दर और कठिन नर्तन रचना का आविष्कार हुआ।

ईसा १८०१ में राजा भाग्यचन्द्र का पुत्र मधुचन्द्र[4] राजा हुआ। उसके समय में राखालरास (गोपरास) का उल्लेख मिलता है। इसलिये माना जाता है कि राखालरास का आरम्भ भाग्यचन्द्र के समय से ही हुआ।

---

१. चैथारोल कुम्बावा, पृष्ठ ६९५।
History of Manipur by Jyotirmay Roy, p. 54.
मणिपुर इतिहास—आर० के० सनाहल सिंह, पृष्ठ ८५।

२. अरीबा मणिपुर साहित्य जी इतिहास—पं० खेलचन्द्र सिंह, पृष्ठ १५०।
J. N. Manipuri Dance Akademy Souvenir, p. 9.

३. श्री श्री हरि संकीर्तन—के० धन सिंह, पृष्ठ २४।

४. चैथारोल कुम्बावा (मैतै)—पृष्ठ १७४।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ईसा १८२५ में महाराजा गंभीरसिंह राजा हुआ। उसके समय में गुरु समयरांग ने ताण्डवान्तर्गत गोष्ठभङ्गीपरेंग का सर्जन किया। १८४४ में नरसिंह महाराजा हुआ, उस समय नटपाला की वेषभूषा तथा चलम में सूक्ष्म और विकसित रूप से परिवर्तन हुआ।

१८५० से १८८६ का काल ऐतिहासिक दृष्टया मणिपुर की संस्कृति का सुवर्ण युग था। महाराजा चन्द्रकीर्ति के इस काल में नर्तनरास अथवा नित्यरास का प्राकट्य हुआ। सनाखवा चन्द्रहास,[1] आयगा तखेन्चङ्‌वम् वामन थौरानीसाबी, थोक्‌चोम् मरंबा, इत्यादि गुरुओं ने वृन्दावनभंङ्गी परेंग, खुरुम्बाभङ्गी परेंग तथा ताण्डव का गोष्ठ वृन्दावन भङ्गी परेंग इत्यादि का निर्माण किया। तथा नटपाला में विविध ताल लयों से अन्वित सुन्दर रचनाएँ प्रकट कीं। शृङ्गार रस के चौसठ भेदों पर, गीत संग्रह करके राजा ने गुरु लोगों से 'रसफाङ्‌ग्नबा' (रसविषयक स्पर्धा) करवाया। नृत्य, गीत, ताल, लय, इनकी सर्वाङ्गीण उन्नति इसी काल में हुई।

तदुत्तरकालीन राजाओं के तत्तत्काल में और आज तक भी, ये विषय अधिकाधिक समृद्धतर होते आये हैं। मणिपुर में प्राचीन धर्म और वैष्णव-धर्म की धारा, तत्संलग्न नृत्य गीतादि एक साथ समान रूप से आज तक चलते आये हैं।

प्राचीन काल से राजाओं के माध्यम से गुरु तथा कलाकारों का मणिपुर के वाहर इतर प्रान्तों में जाना-आना होता था। किन्तु गौडीय वैष्णवधर्म के आगमन के वाद इतरत्र संचार ज्यादा हुआ। सन् १९१९ में कविगुरु रवीन्द्रनाथ टैगोरजी ने ही सबसे प्रथम मणिपुर के वाहर शान्तिनिकेतन में शिक्षण देने के लिये मणिपुरी गुरुओं को बुलाया। तव से सारे भारत में इस नृत्य का धाराप्रवाह प्रचार हुआ। श्री उदयशंकर एवं मदाम मेनका ने अपनी संस्था में मणिपुरी गुरुओं को रखकर मणिपुरी नर्तन का भी पूरे भारत में तथा विदेश में बहुत प्रचार किया। अभी मणिपुर के वाहर मणिपुरी वृन्द में मुख्यतः झवेरी भगिनियों[2] का वृन्द तथा दिल्ली के त्रिवेणी कलासंगम में श्री सिंहजित सिंह का वृन्द भारत में तथा विदेश में प्रचार-कार्य करता है।

---

१. मैतै जगोई—सुराचान्द शर्मा, भाग० १, पृष्ठ ४६।
२. नयना, रंजना, सुवर्णा तथा दर्शना।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

३. मणिपुरी नृत्यगीत में पौराणिक लोककथाओं का स्थान

प्राचीनकाल से मणिपुरी लोग पुराणों पर और लोककथाओं पर दृढ़ श्रद्धा रखते हैं। मणिपुर के पारम्परिक हिन्दू अपने को गन्धर्ववंश संभूत मानते हैं। इस मान्यता के कारण भी नृत्यसंगीत प्रवृत्ति की अविरत प्रेरणा लोगों को मिलती है। क्योंकि गन्धर्व दिव्य संगीत नृत्य के अधिष्ठाता होते हैं। इसकी एक कथा प्रमाण रूप में महाभारत से उद्धृत करते हैं।

महाभारत के आदिपर्व और अश्वमेध पर्व में उल्लेख मिलता है कि अर्जुन मणिपुर आया था। उस समय गन्धर्वराज[1] चित्रभानु की पुत्री चित्राङ्गदा से अर्जुन का विवाह हुआ था। उससे चित्राङ्गदा को बभ्रुवाहन नामका लड़का हुआ। फिर अर्जुन तीर्थयात्रा में गया। वह किसी अभिशाप के कारण, उन दोनों को भूल गया। कुछ सालों के बाद पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ का घोड़ा मणिपुर आया। उसे बभ्रुवाहन ने बाँधा। तब अर्जुन के साथ बभ्रुवाहन की लड़ाई हुई। उसमें पुत्र के हाथ से अर्जुन मारा गया। चित्राङ्गदा को इस घटना से बड़ा दुःख हुआ। श्रीकृष्ण की प्रेरणा से बभ्रुवाहन पाताल जाकर उलूपी नामक नाग कन्या से मृत संजीवनी मणि लाया। मणि स्पर्श से अर्जुन जीवित हुआ। तब से इस देश का नाम मणिपुर पड़ा। इस प्रकार मणिपुरी लोग अपने को गन्धर्वराज चित्रभानु का वंशज मानते हैं।

मणिपुर के विषय में एक दूसरी पौराणिक कहानी प्रचलित है। एक समय राधाकृष्ण गोपियों के साथ रासलीला कर रहे थे। उस समय शिवजी द्वार पर थे। किसी को प्रवेश की अनुज्ञा नहीं थी। श्रीकृष्ण की रासलीला की ध्वनि सुनकर, पार्वतीजी ने शिव के साथ रासलीला करने

---

१. Glimpses of Manipuri Language, Literature & Culture, p. 5.

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

का आग्रह किया।[1] उस समय निर्जन स्थान ढूँढते-ढूँढते शिवपार्वती ने पहाड़ों से घिरा हुआ एक जलमय स्थान देखा। उसको रास के अनुकूल बनाने के लिये शिवजी ने त्रिशूल से पहाड़ वेध कर पानी प्रवाहित किया। उस स्थान को अभी 'चिंगनुंगहूत' कहते हैं।

वहाँ अन्य देवताओं और गन्धर्वों के साथ सात दिन तक रासलीला हुई। उस समय नागराज अनन्त ने इस रास प्रदेश को प्रकाशित किया तब से यह मणिपुर नाम[2] से विख्यात है। यह दूसरी आख्यायिका है।

प्राचीन समय से मणिपुर में लाई हरावबा उत्सव में नोंग्पोक निङ्गथौ और पान्थोइबी की कहानी नृत्य नाटिका के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

पान्थोइबी की जीवनी का उल्लेख पान्थोइबी खोंगुलोल नामक प्राचीन साहित्य में मिलता है। मणिपुर के हिन्दूलोग इन दोनों देवताओं को शिव-पार्वती का अवतार मानते हैं।

एक बार नोंग्पोक[3] निङ्गथौ और पान्थोइबी दोनों परस्पर प्रथम दर्शन मात्र से आकर्षित हुए और अनुरागातिशय से पान्थोइबी मूर्च्छित हुई। पान्थोइबी के पिता उसको ढूँढने लगे, तब नोंग्पोक निङ्गथौ ने व्याघ्रचर्म धारण किया जिससे वे उसको पहचान न सके। पान्थोइबी तब से मुग्ध जैसी रहने लगी। तब उसके पिताजी ने खाबा नामक पुरुष के साथ विवाह कर दिया। पान्थोइबी के जीवन में इससे कुछ परिवर्तन नहीं हुआ। क्योंकि उसने अपनी काया वाचा मन को नोंग्पोक निङ्गथौ को समर्पित किया था। जब नोंग्पोक निङ्गथौ को इस बात का पता चला तब वह उसे ढूँढने के लिए घर से बाहर निकल पड़ा। दोनों इम्फाल में मिले, और एक साथ जीवन व्यतीत करने के लिए वचनबद्ध हुए।

मणिपुर के मोयरांग नगर में खुमलवंश का खंभा, और मोयरांग वंश की थोइबी नाम से प्रसिद्ध प्रेमीयुगल हुआ था। ये लोग १२ वीं सदी में हुए। इतिहासमूलक यह दन्तकथा बहुत विस्तार से मणिपुर के कथाकार घर-घर विदित इस कहानी को गाते हैं। इनको भी मणिपुर के कथाकार शिवपार्वती का अवतार मानते हैं।

---

१. History of Manipur by Jyotirmoy Roy, p. 3.
२. विजय पाञ्चाली—मुतुमञ्जुलनसिंह, पृष्ठ १२।
३. History of Manipur by Jyotirmay Roy, p. 12.

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

खम्भा थोइबी ने लाई हरावबा उत्सव में भाग लिया था, उसकी याद में आज भी लाई हरावबा उत्सव में खम्भा थोइबी के नाम से नृत्य करते हैं, यह लाई हरावबा का ही एक अंग है।

कथाओं की श्रद्धा ने नृत्य-संगीत की परम्परा को अविरत रखा है। कथा और नर्तन प्रवृत्ति दोनों परस्पर अनुप्राणित हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

४. लाई हरावबा

'लाई' शब्द का अर्थ देवता, 'हरावबा' शब्द का अर्थ आनन्द देने वाला है, इस नृत्य का उद्देश्य देवता को प्रसन्न करना है। यह लाई हरावबा उत्सव मणिपुर की प्राचीन संस्कृति का एक अंग है। यह उत्सव जन-जीवन में अङ्गाङ्गी रूप से समन्वित है। मणिपुर के कोने-कोने में वैशाख और ज्येष्ठ मास में यह उत्सव होता है। प्रत्येक बस्ती में (मोहल्ले में) उस विभाग का एक देवता होता है। उसे उमंगलाई कहते हैं। उमंग याने वन, लेकिन यहाँ यौगिक अर्थ में व्यवहार नहीं है। वनस्पति प्रथम सजीव सृष्टि (तरु, गुल्म वगैरह) मानी जाती है। इसलिये उसको भगवान् के सृष्टि-रहस्य का प्रथमावतार मानकर उसमें देवता का अधिष्ठान है, ऐसा मानते हैं। अथवा उसे उद्भिज भगवान का प्रथम आविष्कार मानते हैं। इस अनुष्ठान से मनुष्य के त्रिविध ताप दूर होते हैं और सुखसमृद्धि प्राप्त होती है तथा कामनाएँ भी सिद्ध होती हैं। इस देवता के समक्ष, सृष्टि का आविष्कार भी देव-दासियों के अभिनय द्वारा उपस्थित करते हैं।

इस उत्सव के नर्तन को गुरुलोग मणिपुरी नर्तन का मूल स्वरूप मानते हैं। कहते हैं कि गुरु सीदाबा के आदेशानुसार जब लाईबुंङ्थौ मापन (नौ देवता) और लाईनुरातरेत् (सात देवियों) ने नृत्य द्वारा सृष्टि के आविष्कार का प्रकाश किया तब हराबा लाईथिंगाई नाम के एक असुर देवता ने उसका ध्वंस किया। यह अवस्था देखकर गुरु सीदाबा ने नोंग्थांग-लैमा नामक सुंदरी को हराबा के वशीकरण में नियुक्त किया। नोंग्थांग-लैमा ने, आदेशानुसार नृत्य द्वारा, हराबा को वश किया। पण्डित लोग इस नृत्य को मणिपुर का आदि नृत्य मानते हैं। लाई हरावबा के विधान में नोंग्पोक निङ्गथौ और पान्थोइबी की कहानी, नृत्य-नाट्य के रूप में उपस्थित की जाती है। पृथ्वी की उत्पत्ति के बाद, उसका जो उत्पत्तिक्रम नर्तन द्वारा दिखाया जाता है, उसको 'लाईबौ जगोई' कहते हैं। यह नृत्य माईबी अर्थात् देवदासियाँ करती हैं। उमंगलाई की पूजा इत्यादि इन्हीं के

लाई हरावबा उत्सव में माईबियाँ तथा स्त्रियाँ

[पृ० १४

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)
द्वारा सम्पन्न होती है। माइबियाँ अलौकिक गुणसम्पन्न होती हैं, ऐसा मणिपुरी लोगों का विश्वास है। किसी-किसी समय उन पर देवताओं का आवेश भी होता है। उस समय उनका आचरण उन्मत्त की तरह होता है। उस स्थिति में वे भूत और भावी घटनाएँ भी बता सकती हैं। माईबा, जो इस विषय के पुरोहित हैं, वे उनको पीछे स्वाभाविक अवस्था में लाते हैं। मणिपुर के प्रादेशिक पाँच विभागों में, लाई हरावबा के पाँच प्रकार हैं। जैसे—कङ्गलै, मोईरांग, ककचिंग, आन्द्र, चक्पा (फयेंग या लैमरांग)। इनमें नाना प्रकार की भिन्नता देखी जाती है। विशेषतः यह भिन्नता वैष्णवातिरिक्त संप्रदायों के साथ ज्यादा होती है। इनमें मूलभूत या सबसे प्राचीन कौन-सा प्रकार है, इस विषय में गवेषणा चलती है। प्रति अंचल में (विभाग में) यह अनुष्ठान बहुत दिन तक चलता है। तत्तद्विभागीय जनता स्वशक्त्यनुसार भगवान को प्रसन्न करने की चेष्टा करती है। अनेक प्रकार के नियमों के बन्धन में रहकर यह उत्सव सम्पन्न किया जाता है। समझने के लिये संक्षेपतः सामान्य क्रम इस प्रकार है :—

(१) लाई फिसेत्पा

उत्सव के पूर्वदिन आभूषणादि द्वारा देवश्रृङ्गार।

(२) लाई हौबा

उत्सव के प्रथम दिन जल में से देवता का आवाहन किया जाता है। उसको 'लाई हौबा' कहते हैं। देवता को प्रसन्न करने के लिये 'कोन्थारोल' करते हैं। कोन्थारोल का अर्थ है, देवता के लिये जल में सुवर्ण रजतादि धातु प्रक्षेप करना। पीछे 'लाईथेंग गत्पा' याने जल में देवता जागृति के लिये नानाविध कर्म करना। फिर जलाशय से मन्दिर तक देवता का प्राण लाना और स्थापन करना। इस क्रिया को 'लाईमांग यौबदगी तौगदबा थबक' कहते हैं। इसके बाद उत्सव का दूसरा अध्याय होता है। इस अंश में देवता का नित्य कार्य होता है। इसको "नुमित खुदिंगगी थौरम" कहते हैं जिसके द्वारा देवता को आनन्द देते हैं। वह "होइलावबा" नाम से एक विशेष प्रकार का गीत होता है।

इसके बाद तीसरा अध्याय आता है, जिसमें 'लाइबौ खुत्थेक' होता है जिससे हस्तकों के द्वारा सृष्टिरहस्य व्यक्त होता है। इस विधि में विशेष अंश है—'लाईबौ लागी लैहुल'—इसमें सात केले के पत्ते एक के ऊपर एक रखकर, उस पर लांग्थ्रै नामक पत्ते को प्रतिष्ठित करते हैं। फिर अनेक

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कृतियों के बाद मन्दिर के गर्भगृह से उत्सवांगण में देवता का आह्वान करते हैं। इसको 'लाई हौबा' कहते हैं।

पेना (रावण हस्त वीणा) नामक वाद्य के साथ "होइरौ हया" नामक विशेष गान होता है। इस गीत का बड़ा प्राधान्य है।

अब 'लाइबौ खुत्थेक' के विशेष अंश का यहाँ कुछ वर्णन करते हैं।

(क) हक्चांग सावा = शरीर गठन।

(ख) युम सारोन खुत्थेक = घर बनाने की क्रिया हस्त के द्वारा (हस्ताभिनय द्वारा) दिखाना।

(ग) फि सारोन खुत्थेक = हस्ताभिनय द्वारा वस्त्र निर्माण दिखाना।

इससे अतिरिक्त विशेष आकर्षक और गौरवास्पद नृत्य, "पान्थौइबी जगोई" या पार्वती का नृत्य होता है। इसके साथ "पाउषाईशै" नामक एक विशेष प्रकार का गीत गाते हैं। इसके अनुषङ्ग से नोंग्पोक निंग्थौ तथा पान्थोइबी कथोपकथन और नृत्य करते हैं।

चतुर्थ अध्याय में 'आनोई रोल' (अभिनय युक्त नृत्य) करते हैं। पाँचवाँ अध्याय कृषिकार्यादि अभिनय से प्रदर्शित करते हैं। इसको पाम्यान्बा या लौबा कहते हैं।

इसमें ही 'पाम्हाई जगोई' प्रस्तुत किया जाता है अर्थात् पेड़-पौधा काटने का और उसे परिष्कृत करने का अभिनय युक्त नृत्य करते हैं।

षष्ठ अध्याय में बाँस की टोकरी से मछली का शिकार अभिनय द्वारा दिखाया जाता है। उसे 'लोंग्खोन्बा' कहते हैं।

सप्तम अध्याय में 'फिबुल हाबी' याने कन्दुक क्रीड़ा करते हैं। माईबा और माईबी दो गेंद (कपड़े का) बनाकर उनको देवदेवी का प्रतीक बनाकर क्रीडा करते हैं। उस समय वे लोग चोंगखोंग्येत्पा अर्थात् लाई हराबवा उत्सव में जो विशेष प्रकार के चार छाते होते है, उनको चार कोने में रखकर उन्हीं दो गेंदों से विविध नियमानुसार खेलते हैं। उसका वर्णन 'देव संभोग' शब्द से किया जाता है।

अष्टम अध्याय में नर्तक-नर्तकी गण सर्प गति का विशिष्ट अनुकरण करते हैं। उसे 'लाइरेल माथेक', कहते हैं। अनुष्ठान समाप्त होने के तीन

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

दिन पहले माईबी देवतावेश में, उपस्थित दर्शकों में से एक लड़की को देवता की स्त्री तरीके चुनती हैं। उसको 'कंग्लैथोक्पा' कहते हैं। इस समय माईबी पोलो की लकड़ी लेकर उस लड़की को स्पर्श करती है। इस विशिष्ट अंश को 'कांग्जैसान्नबगीमवोंग' कहते हैं।

इसके बाद लाई हरावबा का आखिरी नवम अध्याय होता है। इस संपूर्ण अनुष्ठान को 'औग्रीहन्गल' कहते हैं। इसमें 'लउइन ईशै' और 'लउका इशै' अर्थात् कृषिकार्य का आनन्द संगीत, और कार्य समाप्ति के बाद का गृहगमन कालीन गीत होता है। इसके अतिरिक्त 'लिक्शारी ईशै' नाम का एक गुरुत्वपूर्ण संगीत प्रस्तुत होता है। इसमें एक रस्सी पकड़कर गोलाकार लड़के और लड़कियाँ दोनों मिलकर गाना गाते हैं। उत्सव के अन्तिम दिन का नाम 'लाई रोई' है।

यह क्रम पं० कुलचन्द्र सिह के "मैतै लाई हरावबा" पुस्तक में प्रथम पृष्ठ से अन्तिम पृष्ठ तक विस्तार से दिया है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

९. नटपाला

महाराजा भाग्यचन्द्र के समय में संकीर्तन के रूप में इस नटपाला की उत्पत्ति हुई, ऐसा गुरु लोग मानते हैं। 'नट' शब्द का अर्थ अभिनेता अथवा नर्तक है। 'पाला' शब्द का अर्थ वृन्द, अतएव नटपाला का अर्थ अभिनेतृवृन्द या नर्तकवृन्द है।

बंगदेश पाला नाम से जो संकीर्तन का प्रकार प्रचलित है, उसका अनुकरण करके नर्तन को महत्त्व देकर इस नटपाला की सृष्टि हुई।

नटपाला में गीत, मृदङ्ग के बोल, चलन, वेषभूषा बंगदेशपाला से कुछ भिन्न है। बंगदेशपाला में पुङ्ग (मृदङ्ग) ज्यादा बड़ा और लम्बा होता है, तथा करताल बड़े होते हैं। नटपाला में ये दोनों उससे छोटे होते हैं। नटपाला में पुङ्ग चलम् (मृदङ्गचलन) तथा करताल चलम् (करताल चलन) ये दोनों नर्तन धाराएँ उत्कृष्ट रीति से विकसित हुई हैं। इस नटपाला में बजाने का क्रम नियत है। इसमें राधाकृष्ण-सम्बन्धी लीलाओं का वर्णन गाते हैं। नाना वृन्द के गायक और वादकों की इस विषय में प्रतियोगिता चलती है। जैसे वाशक फङ्ग्नबा। फङ्ग्नबा याने प्रतियोगिता। वाशक शब्द यहाँ वासकसज्जा नायिका के नाम का घटक है। इसमें वासकसज्जा, अभिसारिका, खण्डिता, उत्कण्ठिता, विप्रलब्धा, कलहान्तरिता इत्यादि नायिकाभेद कहानी के रूप में प्रयुक्त होते हैं। वाशक नाम देने का कारण— वासकसज्जा प्रस्तुत होने के बाद कृष्ण के न आने से राधा मानिनी बनती है, इस प्रकार वासकसज्जा का ही प्रधान सम्बन्ध होने से वाशक नाम दिया जाता है। पुरुष का वृन्द जब वाशक करता है, तब उसे नीपावाशक कहते हैं। स्त्रियाँ वाशक करती हैं तो उसे नुपीवाशक कहते हैं। इसका अनुष्ठान कम से कम दो या तीन लडकियाँ कर सकती हैं।

इसके अतिरिक्त नटपाला में पुरुषों का रस फङ्ग्नबा है। इसमें शृङ्गार के विप्रलम्भ और संभोग के ६४ भेदों का वर्णन देकर प्रतियोगिता होती है।

नटपाला

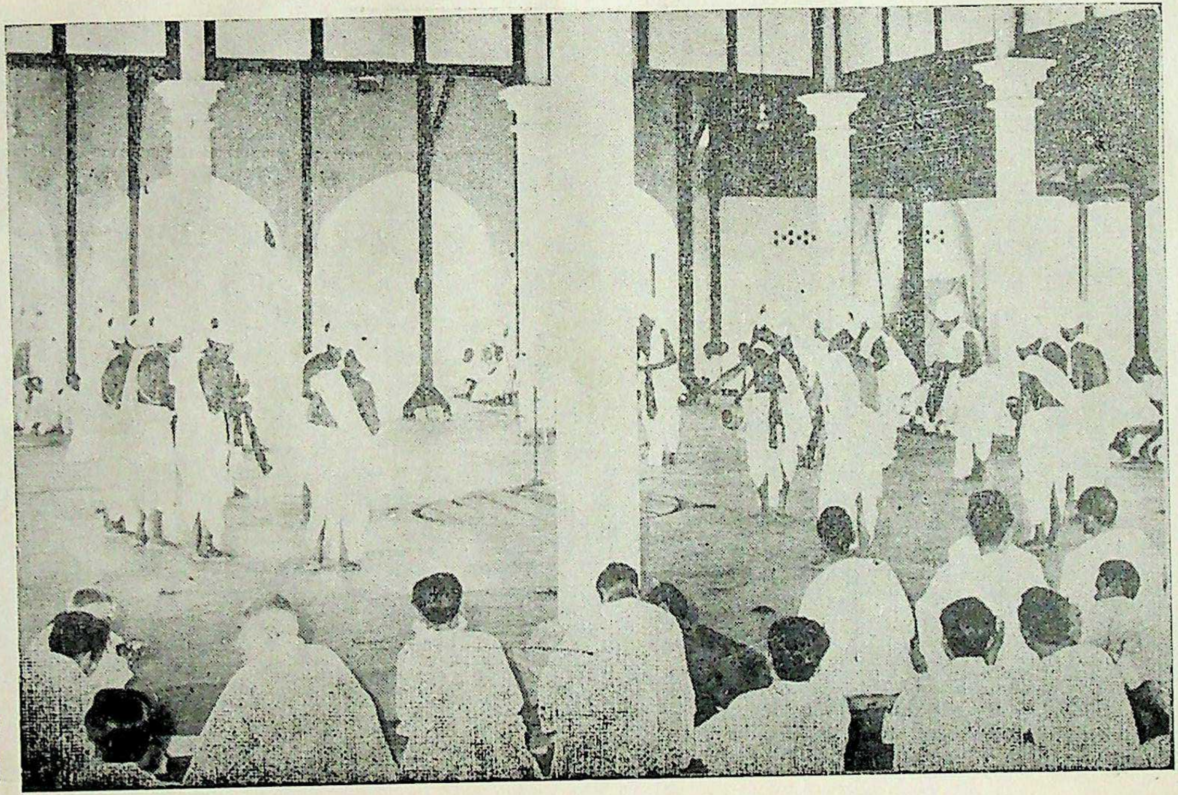

गोविन्दजी के मन्दिर में संकीर्तन [पृ० १८

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

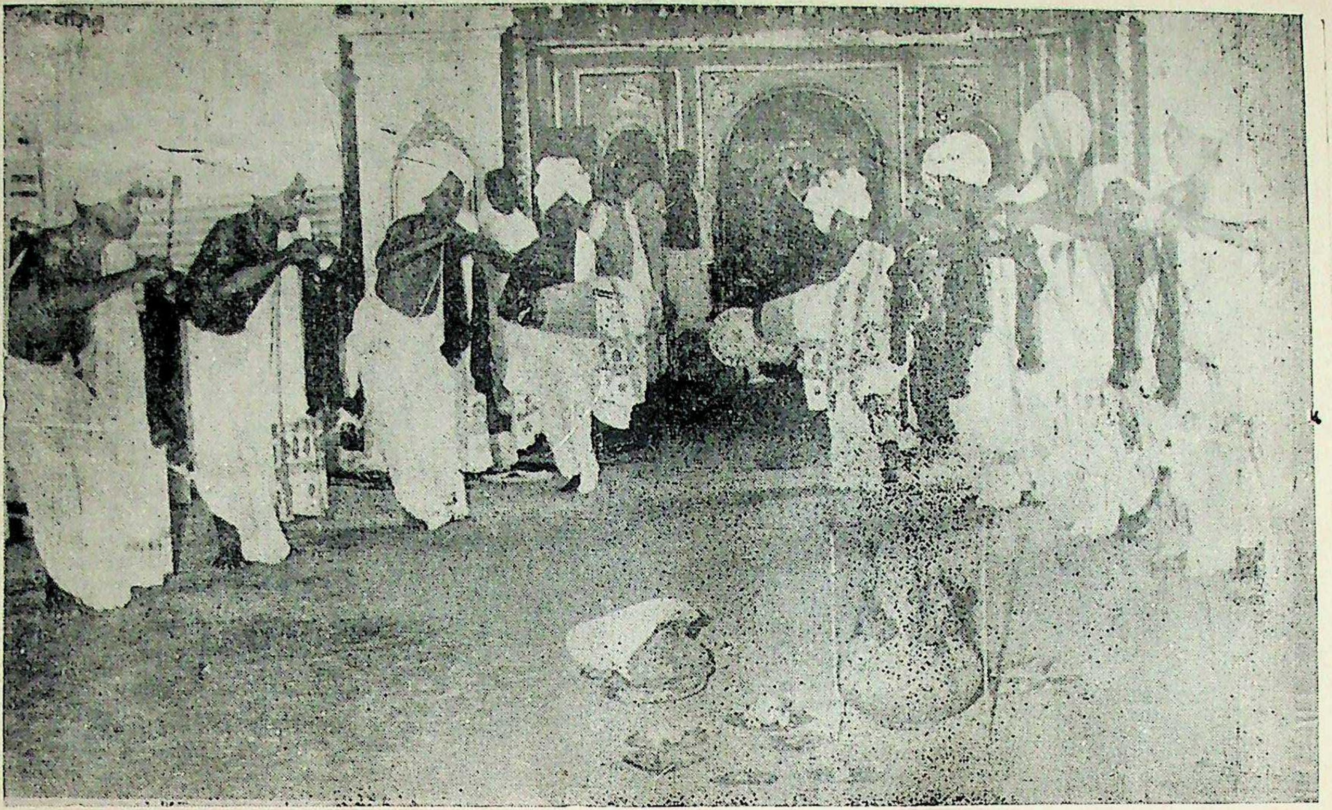

मंडपमें नटपाला विधान में करताल चलन तथा मृदंगचलन [पृ० १९

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

इस नटपाला में दो मृदङ्ग वादक (पुङ्ग यैबा) रहते हैं। इसमें एक प्रधान गायक (ईशै हन्‌बा) होता है और चार-पाँच उसके सहकारी होते हैं, इनको खोङ्‌ग्बाङ्‌बा कहते हैं। और दूसरे गायक नर्तकों के मुख्य को दुहार कहते हैं। इन सबको एक साथ पाला कहते हैं। दुहार का, जो गायक नर्तकवृन्द है, मुख्य काम प्रधान गायक के गाने की पुनरावृत्ति करना है। दुहार अवश्य एक निपुण नर्तक होता है। इन सब के हाथ में करताल होते हैं। नटपाला में प्रबन्ध और तालप्रबन्ध बहुत ऊँचे दर्जे के होते हैं।

नटपाला का क्रम

(१) नटराग—विविध छन्दों में विशिष्ट बोल का प्रबन्ध।

यह राग किये जाने वाले उत्सव का मूर्त स्वरूप होता है। इसी प्रकार विभिन्न अनुष्ठानों में विभिन्न राग बजाते हैं।

(२) सञ्चार—यह भी बोलों का विशेष प्रकार का नियत प्रबन्ध है। इस सञ्चार के द्वारा उपरोक्त मूर्ति में प्राणप्रतिष्ठा की जाती है। इसकी अनेक रचनाएँ होती हैं।

(३) तीनताल अचौबा (मात्रा ८) अथवा ताल तीनताल मचा (मात्रा ७)

(४) ताल राजमेल (मात्रा ७ या १४)

(५) ताल तान्‌चेप (मात्रा ४)

(६) ताल मेन्‌कूप (मात्रा ६)।

यह क्रम तो अवश्य ही रहता है। लेकिन इसके बीच-बीच में अनेक प्रकार के ताल और प्रबन्धों को अन्वित करके उसको समृद्ध किया जाता है। नटपाला के अन्तर्गत ध्रुमेल नामक एक भिन्न प्रकार का अनुष्ठान होता है।

वैष्णव धर्म के सभी पर्वों में प्रधान रंग या पूर्व रंग के रूप में इस नटपाला का विधान होता है। जन्म से मृत्यु तक सभी सामाजिक प्रसंगों में नटपाला किया जाता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

६. रासलीला

मणिपुर का रासनृत्य भारत के नृत्य क्षेत्र में एक अपूर्व आविष्कार है। महाराजा भाग्यचन्द्र जयसिंह ने ई० स० १७७६ में मणिपुरी रासलीला का प्रथम प्रकाश किया। मणिपुरी गुरुजनों ने विभिन्न ग्रन्थ एवं पदावलियों के आधार से, इन रासों को संघटित किया और इसके अतिरिक्त स्वरचित पदावलियों से समन्वित करके इनको नाटच रूप में परिणत किया। ये रास नाना प्रकार के हैं। भगवान् श्रीकृष्ण की विभिन्न लीलाओं में से अपने अनुकूल लीलाओं को चुनकर, नाना प्रकार के रासों का निर्माण किया गया।

समस्त रासनृत्यों में महारास का प्रथम सर्जन हुआ। रास शब्द से साधारणतया स्त्रीप्रधान रास ही विवक्षित होता है, जैसे महारास, वसन्त-रास, कुञ्जरास, नित्यरास अथवा नर्तनरास। इसके अतिरिक्त चूराँचाद महाराज के समय में दिवारास नाम का नूतन रास प्रकट किया गया। पुरुष प्रधान रासों के बीच राखाल रास (गोपरास, या षन्थेन्बा) और उलूखल रास (दामोदर रास) है। प्राचीन शास्त्रकारों ने रास को तीन प्रकार से विभक्त किया है : तालरास, दण्डरास, मण्डलरास। तालरास को वर्तमान में खुबाकइशै कहते हैं। खुबाक शब्द का अर्थ ताली, इशै शब्द का अर्थ गीत। इस रास में ताली तथा गीत का साहचर्य रहता है। राखाल तथा उलूखल रास में दण्डरास की छटा (छाया) रहती है। बालकों के पास गायें चराने के दण्ड को राखाल कहते हैं, मणिपुर की राजधानी इम्फाल में इसका चलन, नहीं है। लेकिन ग्रामान्तरों में अन्यत्र काछाड़ जिले में कहीं-कहीं दण्ड भ्रमणपूर्वक नृत्य किया जाता है। प्रसंग से जिसका उल्लेख किया है, वह दण्डभ्रमण नृत्य, इम्फाल में कोई-कोई गुरु उलूखल रास में करवाते हैं। लेकिन यह दण्डचालन, जो ग्रामान्तरों में और काछाड़ जिले में होता है, उससे भिन्न है। स्त्रियों का रास मण्डल रास के अन्तर्गत होता है।

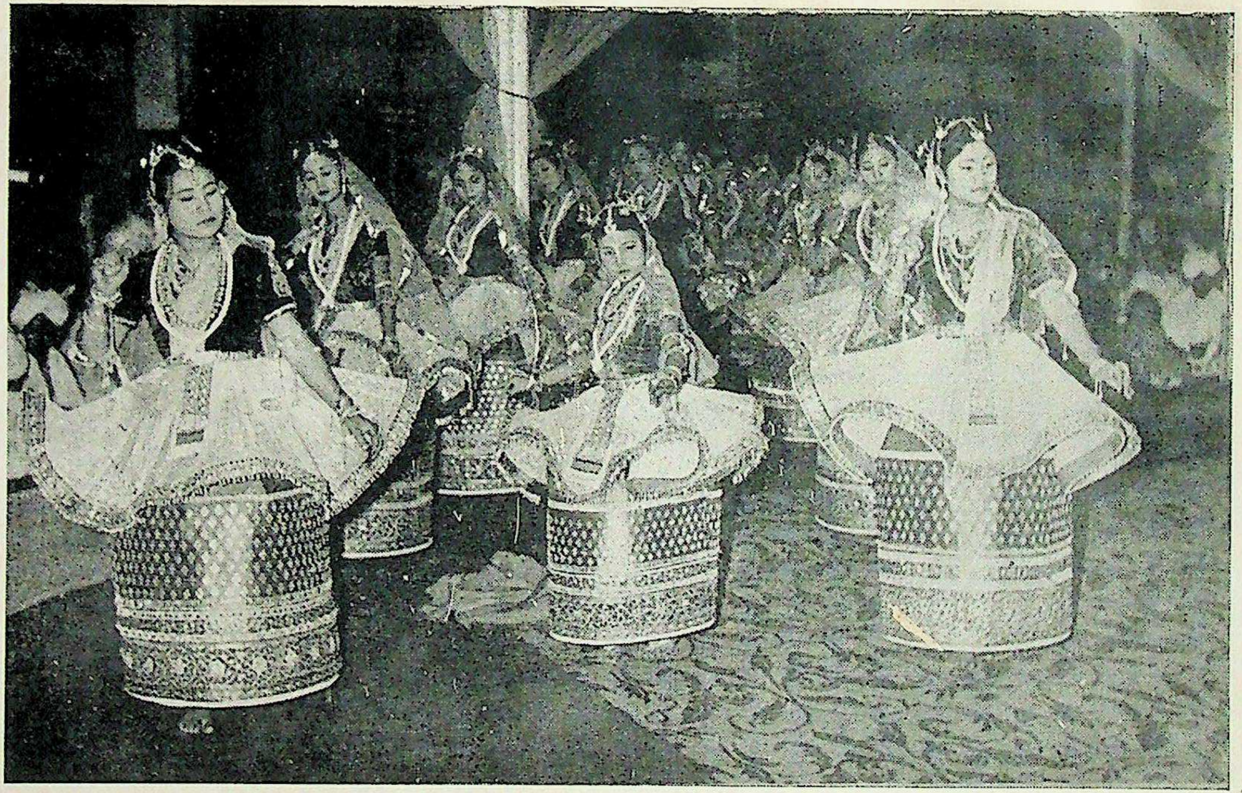

रास मंडप में रासलीला–नित्यरास

[पृ० २०

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सन् १७७९ में कार्तिक मास की ११ तारीख को हरिवासर में शुक्रवार के दिन गोविन्दजी का अभिषेक हुआ और रासमण्डल में पाँच दिन तक महारास हुआ। स्त्रीप्रधान रासों में मुख्य क्रम प्रायः सब में एक ही होता है। क्रम का उल्लंघन नहीं कर सकते। क्रम इस प्रकार है :—

पूर्व रंग के रूप में प्रथम नटपाला करना आवश्यक है।

(१) रागमचा या नुवा = विशिष्ट बोलों पर प्रबन्ध।
(२) सूत्रधारी या (सूत्रधारिणी का) विशिष्ट रागालाप। जैसे वसन्त रास में वसन्त राग, महारास में केदार राग इत्यादि।
(३) वृन्दावन वर्णन।
(४) वैष्णव वन्दना।
(५) कृष्णाभिसार।
(६) युगलरूप प्रार्थना।
(७) मण्डली साजन।
(८) गोपियों का विशिष्ट रागालाप।
(९) मपोप[1] जगोई।
(१०) भङ्गीपरेंग।
(११) कृष्ण नर्तन।
(१२) राधा नर्तन।
(१३) आत्म-समर्पण।
(१४) पुष्पाञ्जलि।
(१५) प्रार्थना।
(१६) आरती।
(१७) गृहगमन।

---

१. रास के क्रम में गोपियों के रागालाप के बाद मपोप जगोई के गीत और नृत्य शुरू होते हैं, वे नियत तालों के साथ होते हैं—प्रथम तीनतालमचा (७ मात्राओं का), अथवा तीनताल अचौबा (८ मात्राओं का), राजमेल (७ मात्राओं का), तान्चेप (४ मात्राओं का) और चालो (८ मात्राओं का तीन ताल मेल)।

प्रसङ्ग से यह उल्लेखनीय है कि, नटपाला में तान्चेप के बाद, मेन्कूप आता है, लेकिन रास में चालियाँ ही आती हैं। मेन्कूप मपोप जगोई में नहीं होता। मपोप जगोई में वृन्दावन वर्णन तथा श्रीकृष्ण स्वरूप वर्णन होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रत्येक रास में कौन-कौन सा भङ्गी-परेंग करना है इसका नियम होता है। अगर किसी कारण से प्रोक्त भङ्गियाँ न हो सकें, तो भी अचौवा भङ्गी अवश्य करनी पड़ती है। प्रत्येक रास रात को ९ बजे आरम्भ होकर उषःकाल में समाप्त होता है।

प्रत्येक रास में गोविन्दजी के मन्दिर में, तथा अन्य मन्दिरों में (जो राजसत्ता को मान्य हैं) जिस प्रकार नृत्यगीत की रचना होती है, उससे ग्रामाञ्चल में (खुलाक) होनेवाले रास में, नृत्यगीत की रचना अलग करनी पड़ती है। गोविन्दजी के मन्दिर में परम्परा को चालू रखने के लिए नृत्यगीत नियत होते हैं। परन्तु खुलाक में नया सर्जन करने का स्वातन्त्र्य रहता है।

गोविन्दजी के मन्दिर में राधाकृष्ण की मूर्ति रासमण्डल के मध्य स्थापित करके रास करते हैं। उसमें राधाकृष्ण की भूमिका कोई नहीं करता। सूत्रधारियाँ राधाकृष्ण का वर्णन करती हैं और गोपियाँ प्रसङ्गानुसार गाकर नृत्य करती हैं।

किन्तु अन्यान्य जगहों में राधाकृष्ण की भूमिका कलाकार स्वयं करते हैं। महाराजा भाग्यचन्द्र ने स्वप्नादेश के अनुसार कटहर (पनस) के स्तम्भ से मूर्ति बनवाकर स्थापित की। प्रथम रास के समय राधा की मूर्ति संपूर्ण तैयार नहीं थी। इसलिये महाराजा ने अपनी कन्या बिम्बावती मञ्जरी को गोविन्दजी के चरण में अर्पण किया और उससे ही राधा की भूमिका करवाई। उस बिम्बावती ने भी काया वाचा मनसा अपने को कृष्ण चरण में समर्पित करके, नवद्वीप में आकर अनुप्रभु नामक गोविन्दजी के मन्दिर की स्थापना की और उसकी सेवा में ही जीवन समर्पित किया।

अनेकों के मत से रास एक धार्मिक अनुष्ठान है। इसी हेतु रंगमंच पर सम्पूर्ण भाव से प्रदर्शित करना कठिन है और ऐसा करना भी असंभव है। क्योंकि एक रास खूब लम्बे समय तक चलता है और वह कष्टसाध्य भी है। फिर भी यह ध्यान में रखना चाहिये कि रास नृत्यनाट्य है। रङ्गमंच पर करते समय उसकी नाटकीयता प्रस्तुत रखनी चाहिये। कारण, कहानी की नाट्यमयता नृत्य के माध्यम से व्यक्त होकर दर्शकों के सामने सुन्दरता के साथ अर्थवाही रूप में उपस्थित होनी चाहिये।

कहानी यथार्थ रूप से उपस्थित न हो तो रास की वास्तविक रसमयता साधारण लोगों के अन्तःकरण में प्रतीत नहीं होगी।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

महारास

रंगमंच पर झवेरी बहिनें तथा उनके मणिपुरी नर्तनालय के कलाकार वृन्द, 'महारास' में [पृ० २३

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

रास के विषय में एक आवश्यक मनोरञ्जक बात यह है कि राजाओं के प्रतिष्ठित मन्दिरों में नियत दिनों में रास होते हैं और अन्यत्र उसके बाद होते हैं। जैसे महारास कार्तिक पूर्णिमा के दिन राजा के मन्दिरों में होता है। उसके बाद शरद् ऋतु विद्यमान होने तक अन्यान्य स्थलों पर करते हैं। इसी रीति से वसन्तरास, राखालरास, कुञ्जरास इत्यादि किये जाते हैं।

नर्तनशास्त्र में जिन मूलतत्त्वों का उल्लेख रहता है, उन सबका समावेश इन रासों में होता है। इनमें शास्त्रनियमों का अतिक्रमण नहीं होता।

महारास

महाराजा भाग्यचन्द्र ने श्रीमद्भागवत के रासपञ्चाध्यायी के श्लोकों के आधार पर १७७९ में महारास प्रस्तुत किया। गुरुओं ने पदावलियों में, स्वरचित पद्यों को जोड़कर, इसको नाटयरूप दिया। शरत् की कार्तिक पूर्णिमा में यह रास होता है। गोविन्दजी के मन्दिर में भागवत के आधार पर संस्कृत पद्यों का ही व्यवहार होता है। खुलाक में गुरुलोग पद्यावलि और स्वरचित पदों का ज्यादा उपयोग करते हैं।

महारास की कहानी—

शरद्ऋतु की पूर्णिमा की रात्रि में चन्द्रिका की शोभा से मुग्ध होकर भगवान् श्रीकृष्ण ने यमुना पुलिन के समीप एक उपवन में मुरलीवादन आरम्भ किया। नाना कार्यों में मग्न गोपियाँ अकस्मात् मुरली का आह्वान सुनीं। जो गोपी जिस अवस्था में थी, उस अवस्था को भूलकर श्रीकृष्ण से मिलन के लिये निकल पड़ी। श्रीकृष्ण ने राधा की तथा गोपियों की व्याकुलता देखकर उन्हें घर लौट जाने का आदेश दिया और कहा कि पति-पुत्रादि की सेवा ही नारीगण का धर्म है, और रात्रि में वन्य प्राणी तथा लोकनिन्दा का भी भय दिखाया।

इस प्रकार श्रीकृष्ण के उपदेश से विषण्ण होकर गोपियों ने कहा, "श्रीकृष्ण ही एकमात्र हम गोपियों का आश्रय है। उसका सान्निध्य न रहने से, हम लोगों के प्राण ही निकल जाएँगे। इसलिये हम लोगों से ऐसी क्रूर बातें मत करो, संसार और सामाजिक बातों को वैराग्य भाव से छोड़कर हम लोग तुम्हारे चरण के आश्रय में आई हैं। हम लोग मुमुक्षु हैं, इसलिये तुम हम लोगों को मुक्ति दो"। उनकी इस तरह की विरक्ति देखकर, श्री कृष्ण ने चुम्बनादि प्रदान द्वारा नृत्य आरम्भ किया। तब गोपीगण ने

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

अपने को सर्वश्रेष्ठ समझा। उनके मन में अहंकार का भाव देखकर, उनके अहंकार को चूर्ण करने के लिये, वे राधा को लेकर अकस्मात् अन्तर्हित हुए। श्री कृष्ण के अदर्शन से गोपियाँ आकुलता के साथ उनके पदचिह्नों का अनुसरण करके उन्हें खोजने लगीं। मार्ग में मिलने वाले प्रत्येक वृक्षलता, वल्ली, पौधे से और वहाँ के प्राणियों से श्री कृष्ण का पता पूछने लगीं। तथा तन्मयता के कारण कृष्णमय होकर, उत्साह से हम कृष्ण हैं, ऐसा मानकर श्री कृष्ण की बाल लीलाओं का अनुकरण करने लगीं। इधर श्री कृष्ण के साथ चलते-चलते श्री राधा के मनमें गर्व हुआ कि अन्य गोपियों से मैं सौभाग्यशालिनी हूँ।

इस प्रकार गर्व करके कृष्ण से कहने लगी, "मैं चलने में असमर्थ हूँ, मुझे स्कन्ध पर लेकर चलो"। अन्तर्यामी भगवान् श्रीकृष्ण ने "मेरे स्कन्ध पर चढ़ो", ऐसा कहा और राधा का गर्व हरण करने के लिये अपने को अन्तर्हित किया। तब राधा भी अतिशय विलाप करती हुई मूर्च्छित हो गई। इतने में कृष्ण का अन्वेषण करने वाला गोपीवृन्द वहाँ पहुँच गया, और पास में जा कर देखा कि यह मूर्च्छित अवस्था में राधा ही है। तब श्री राधा को होश में लाकर, फिर उसके साथ श्री कृष्ण का ध्यान और विलाप करने लगीं। उसके बाद वे सब हतगर्व हुईं, यह देखकर श्री कृष्ण ने अपना साक्षात्कार उनको कराया। और अपनी योगमाया से अनेक रूप धारण करके, 'प्रत्येक गोपी के पास मैं विद्यमान हूँ' ऐसा दिखाया। श्री कृष्ण प्रत्येक के पास है, यह देखकर गोपीवृन्द आनंदातिशय से नृत्य करने लगा। एक एक गोपी, एक एक श्याम, इस प्रकार के नृत्य को गोपी गोपाल रास कहते हैं। इस नृत्य की समाप्ति के बाद, श्रीकृष्ण के कथनानुसार सब अपने-अपने घर गईं।

प्रकृत गोपी गोपाल रास नृत्य के द्वारा प्रायः प्रदर्शित नहीं किया जाता। सूत्रधारिणी वर्णन द्वारा गीत रूप में उसको उपस्थित करती है।

यह गोपी गोपालरास, महारास के अन्तर्गत होते हुए भी, कभी-कभी स्वतन्त्र रूप से प्रदर्शित किया जाता है। महारास में राधा नर्तन के बाद श्री कृष्ण-अन्तर्धान होता है। महारास में अचौबाभङ्गी तथा वृन्दावन भङ्गी करते हैं।

कुंजरास

श्रीमद्भागवत में महारास का वर्णन शरद् ऋतु में किया गया है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

शरद् में आश्विन और कार्तिक की दो पूर्णिमाएँ आती हैं। राजर्षि भाग्यचन्द्र कार्तिक पूर्णिमा में महारास कर चुके थे। भागवत की टीका सारार्थ दीपिका में आश्विन मास की पूर्णिमा में भी महारास करने का उल्लेख आया है। इसलिये मणिपुरी गुरु लोगों ने कार्तिक पूर्णिमा के अलावा, आश्विन पूर्णिमा को भी, शरद् ऋतु के वर्णन के पद्य गाकर, कुञ्जरास नामक रास का आविष्कार किया। यह रास एक विशिष्ट कुञ्ज में करने के कारण इसका नाम कुञ्जरास रखा है। यह वर्णनात्मक नृत्य नाट्य है। यह रास भी महाराजा भाग्यचंद्र ने प्रवर्तित किया। इसमें अचौबा भङ्गी का प्रयोग होता है। कुञ्जरास में शरत् का ही वर्णन गाते हैं। जैसे—मपोप जगोई में, तीन ताल अचौबा में गोपियाँ "शरद्यामिनी व्रजकामिनी,"—इत्यादि गाती हैं।

वसन्तरास

"मधु वाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः।"

मधुयुक्त पार्थिव रजों से व्याप्त, इस मधुमती पृथ्वीपर मधुमास-चैत्रमास की अपूर्व वासन्तिक शोभा देखकर भगवान् कृष्ण, राधा और गोपिगणों सहित वृन्दावन के उपवनों में नर्तन की उत्सुकता के कारण रासलीला में मग्न हुए। उसे वसन्त रास कहते हैं। कवि जयदेव विरचित गीतगोविन्द से वसन्त रास की प्रेरणा लेकर उत्तर कालीन वैष्णव कवियों ने वसन्त रास के ऊपर नाना पद्य रचनाएँ कीं। मणिपुर के गुरुजनों ने गीतगोविन्द, चैतन्य-चरितामृत, वैष्णव पदावलि, और कुछ स्वरचित पदावलियों में होली प्रसंग को ग्रथित कर, वसन्तरास को नाट्य रूप दिया। यह रास भी महाराजा भाग्यचन्द्र की अमर देन है।

वसन्तरास की कहानी—

वसन्त ऋतु में श्री कृष्ण गोपियों के साथ रास विलास में मग्न होकर नाना गीतों से आनंदप्रद नृत्य करके अबीर का उद्धूलन करते हैं। उस समय श्री कृष्ण वारंवार राधा के ऊपर पिचकारी से रंग डालकर खेलते हैं। फिर राधा को रंग से पराभूत देखकर, गोपियाँ श्री कृष्ण के ऊपर, अबीर का उद्धूलन करती हैं। और उसमें श्रीकृष्ण सहित गोपियाँ तन्मय होती हैं। (प्रसङ्ग से यह निर्देश करना आवश्यक है कि गुरुलोग आरम्भ से यहाँ तक कथा और क्रम अखण्ड रखकर स्वस्वमतानुसार नाना काल्पनिक रचनाएँ करते हैं। लेकिन इसके बाद, रास का नियत रूप, समान ही होता है।) होली के रंगनर्तन के बाद, रासस्थल में रमझट नर्तन होता है। (इस समय

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सिर्फ चाली नृत्त होता है) उस समय श्री कृष्ण चन्द्रावली को ढूँढकर उसके साथ नृत्य करते हैं। श्री राधिका इन दोनों को देखकर, ललिता और विशाखा से कहती है, "देखो ललिता कृष्ण चन्द्रावली के साथ विहार करते हैं और मुझको साधारण इतर गोपियों के समान ही देखते हैं।" (यह अंश चैतन्य चरितामृत से गाया जाता है :—

साधारण प्रेम देखी सर्वत समता।
राधार कुटिल प्रेम होइल वामता।
क्रोध करी रास छाडी गेलो मान करी।
तारे ना देखिया इह व्याकुल श्रीहरि।)

मन में ईर्ष्या और क्रोध से भरी मानिनी राधा दुःखी होकर कृष्णवर्ण समान अपना प्राणप्रिय नील वस्त्र फेंक कर, दूर एक अज्ञात कुन्जवन में जाकर प्रणयकोप से स्वयं मान करके बैठती है। दूसरी तरफ चन्द्रावली का विहार पूर्ण होने पर श्री कृष्ण देखते हैं तो रासमण्डल में राधा का नीलवस्त्र पड़ा मिलता है और वहाँ स्वयं राधा नहीं दिखतीं। तब राधा के विरह से व्याकुल होकर उसका अन्वेषण करने लगते हैं।

बहुत देर तक अन्वेषण करने के बाद, एक कुन्ज में राधा को पाया। बहुत अनुनय विनय करके, पैर पकड़ कर मान भङ्ग किया। अन्त में राधाकृष्ण सहित गोपी गण ने आनंदमग्न होकर नृत्य किया। फिर सबने गृहगमन किया। कोई-कोई गुरु गृह गमन नहीं दिखाते हैं। यहाँ वसन्त रास की समाप्ति होती है। साधारणतः इस क्रम के अनुसार अनुष्ठान होता है। लेकिन क्रम के प्रत्येक घटक में स्वस्वरुचि बुद्धि शक्त्यनुसार गुरु लोग परिवर्तन करते हैं। घटकों के क्रम को अक्षुण्ण रखते हुए घटक के स्वरूप में, पदादि में और नृत्य में परिवर्तन होता है। सामान्य तौर पर रास का क्रम एक होते हुए भी, वसन्त रास में राधा नर्तन के बाद, अबीर खेल, मान, इत्यादि करते हैं। इस रास में अचौबा भङ्गी परेंग, खुरुम्बा भङ्गी परेंग करते हैं।

नित्यरास (नर्तनरास)

महाराजा चन्द्रकीर्ति के समय (ई० स० १८५०) इस नित्यरास का आविष्कार हुआ। सार्वकालिक होने से इसका नाम नित्यरास है। इसका समय या तिथि निश्चित नहीं रहती। कभी भी कर सकते हैं। इस

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

रास में कहानी प्रधान नहीं होती, नर्तन का ही प्राधान्य होने से, इसको नर्तन रास भी कहते हैं। नित्यरास होते हुए भी, प्राचीन गुरु लोगों ने कहा है कि भगवान् के विशिष्ट पर्व के दिन नित्यरास नहीं होता जैसे चैत्र पूर्णिमा में वसन्तरास, कार्तिक पूर्णिमा में महारास । रथयात्रा के प्रसङ्ग में तत्तत्कार्य निर्वाहानुकूल नर्तन विधान होता है।

श्रीकृष्णदास कविराजकृत "गोविन्द लीलामृतम्" के सर्ग २२, २३ के आधार पर इस रास की रचना की गई है। फिर भी गुरु लोगों ने, प्रथम कृष्ण का अभिसार रखकर वृन्दा की पुष्पशय्या रचना, फिर राधा के लिये श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा इत्यादि काल्पनिक रचना के द्वारा कहानी में परिवर्तन किया है। यह नित्यरास गोविन्दजी के मन्दिर में नहीं किया जाता। इस रास का क्रम अन्य रासों से एक बात में ही भिन्न है। अन्य रासों में कृष्ण रास स्थल में पहुँच कर बाँसुरी वादन करते हैं। लेकिन इसमें शय्या सजाने के बाद वंशीध्वनि करते हैं। और उसे सुन कर गोपियाँ वंशी अनुराग करती हैं। गुरु लोगों ने, नित्यरास में अचौबा भङ्गी परेंग, वृन्दावन भङ्गी परेंग, खुरुम्वाभङ्गीपरेंग करने का नियम बनाया है।

इस रास का उल्लेख पद्मपुराण के पाताल खण्ड में है—

यथा प्रकट लीलायां पुराणेषु प्रकीर्तितः ।
तथा ते नित्यलीलायां सन्ति वृन्दावने भुवि ॥ १ ॥

पद्मपुराण, अध्याय ८३

यह नारद और वृन्दा का संवाद है। पुराण में वर्णित प्रकट लीला और दैनन्दिन लीला के साथ वृन्दावन में नित्य लीला अप्रकट रूप में अखण्ड चलती है। अधिकारी भक्त गणों को भावसमाधि की अवस्था में उसका साक्षात्कार होता है। मणिपुरी गुरुओं ने प्रकट लीला पुरस्कृत की है। श्रीकृष्ण की दैनन्दिन लीला अर्थात् प्रातःकाल से रात्रि शयन काल तक के कार्यक्रमों का वर्णन इसी अध्याय में है। शिवजी नारद को वृन्दा के पास भेजते हैं। नारद वृन्दा से श्रीकृष्ण की दैनन्दिन लीला की जिज्ञासा करते हैं। तब वृन्दा दिनचर्या का वर्णन करती है।

नारद उवाच—

हरेर्दैनन्दिनी लीलां श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ।
लीलामजानता सेव्यो मनसा तु कथं हरिः ॥

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

इस प्रकार प्रश्न करने पर वृन्दा दिनचर्या का वर्णन करके अन्त में राधाकृष्ण और सखियों के रास का वर्णन करती है ।

विहारैर्विविधैं रासलास्य हासपुरस्सरैः ।
सार्धयामद्वयं नीत्वा रात्रेरेवं विहारतः ॥ १०३ ॥

कृष्णदास कविराज ने गोविन्दलीलामृतम् नामक ग्रन्थ पद्मपुराण के पाताल खण्ड के आधार पर लिखा है, ऐसा लगता है ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

७. गोपरास (शन्शेन्बा)

गोष्ठलीला या गोपरास मणिपुर का एक लोकप्रिय नृत्यविधान है। कार्तिक मास की गोष्ठ अष्टमी को (गोपाष्टमी) यह लीला करने की प्रथा है। श्री कृष्ण और बलराम अपने मन्त्रिमण्डल के साथ इसका अनुष्ठान करते हैं। इस रास को राखाल रास कहते हैं। मणिपुरी भाषा में इसे शन्शेन्बा कहते है। यह श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के अन्तर्गत है।

दृश्य के विभागानुसार इस रास के दो भाग हैं: नन्दगृह और गोष्ठ-भूमि। प्रथम अंश में नन्दगृह में श्री कृष्ण के प्रति नन्द यशोदा इत्यादि का वात्सल्य एवं गोप बालकों का सख्य प्रेम (कृष्ण प्रेम) दिखाया जाता है। गोपबालक यशोदा से श्रीकृष्ण को गोचारण में अपने साथ भेजने की प्रार्थना करते हैं। किन्तु यशोदा जी वात्सल्य प्रेम के कारण श्रीकृष्ण को भेजने में हिचकती हैं। अन्त में सब के अनुरोध से, और बलराम के आश्वासन से भेजने को तैयार होती हैं और यशोदाजी श्रीकृष्ण को गोपवेश पहनाकर, सखाओं के साथ गोचारण में भेजती हैं। यहाँ तक नन्दगृह का दृश्य रहता है।

इसके बाद श्रीकृष्ण और उसके साथी गोचारणभूमि पर धवल, लोहित, कृष्णवर्ण की विविध गायों को वेणु बजाते हुए ले जाते हैं। और वहाँ मनोरञ्जन के लिए विविध क्रीडाएँ करते हैं। किन्तु देवों के विरोधी असुर धेनुवृन्द में प्रच्छन्न रूप से धेनुकासुर और बकासुर बनकर आते हैं। उसके बाद दोनों का (गोपाल और असुरों का) भयानक संग्राम होता है। अन्त में, बलराम और श्रीकृष्ण के हाथ से मरने के कारण उनको मुक्ति मिलती है। राखाल रास की यही कहानी है। मणिपुरी गुरुलोगों ने अपनी रुचि के अनुसार, ब्रजभाषा और बंगला पदावलियों के साथ, यह नृत्य नाट्य अनुष्ठित किया। ई० स० १८०३ में महाराजा मधुचन्द्र के समय इस गोपरास का उल्लेख मिलता है। (चैथारोल कुम्बाबा के अनुसार) राजा गम्भीर सिंह के समय यह नृत्य-विधि और भी परिष्कृत हुई।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

गोष्ठलीला का क्रम

स्त्रीप्रधान रासों में जैसे प्रथम नटपाला करते हैं, वैसे इस रास में नहीं होता।

(१) गोविन्द जी के मन्दिर में मृदङ्ग का राग वृन्दावन अहौबी और अन्य मन्दिरों में धप अहौवी बजाने का नियम है। ये दोनों राग अलग-अलग बोलों के प्रबन्ध हैं।

(२) इसमें सूत्रधारिणी स्त्रियाँ नहीं होतीं। पुरुष होते हैं। तथा मञ्जीरा के बदले झाल बजाने का नियम है। यहाँ गौरचन्द्रिका में श्रीकृष्ण की गोष्ठ-गमन अभिलाषा का वर्णन होता है। जैसे—

आजुरे गौराङ्ग मनेकि भाव उठिल।
धवली सावली बोली सघने डाकिल ।।
शिङ्गा वेणु मुरली करिया जयध्वनि।
है है करिया गोरा फिराये पाछनी ।।

इस प्रकार अनेक गीत होते हैं।

(३) नारद, बाशु और द्वारपाल का मिलना, फिर नन्द के साथ आलाप तथा गो पूजा।

(४) नारद के पास कृष्ण बलराम की गोदोहन शिक्षा।

(५) परस्पर एक दूसरे को बुलाकर गोप बालकों का नन्दालय में प्रवेश तथा कृष्ण बलराम को गोष्ठ में ले जाने के लिये यशोदा के प्रति अनुरोध।

(६) कृष्ण की यशोदा के पास संमति देने की प्रार्थना। यशोदा रोहिणी की अस्वीकृति, सखाओं के अनुरोध की विफलता।

(७) फिर बलराम के आश्वासन से कृष्ण को गोपवेश देना।

(८) यशोदा का कृष्ण रक्षा के लिये रक्षामन्त्र बोलना और नारायण की स्तुति करना।

(९) यशोदा का कृष्ण को नृत्य करने के लिये कहना। कृष्ण का सखाओं के साथ नृत्य। यशोदा तथा रोहिणी दोनों को लेकर विदाई की अनुमति लेने के लिये नन्द के पास जाना।

उपनन्द सुनन्द सहित नन्द का आशीर्वाद प्रदान पूर्वक अभिनन्दन।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(१०) आशीर्वाद के बाद नन्द का श्रीदाम, सुदाम इत्यादि के हाथ दोनों को सौंपना ।

(११) जाने के पहले मधुमङ्गल ने यशोदा के पास मिठाई की याचना की। फिर यशोदा का ज्यादा मिठाई देना। सबका मिलकर खूब मिठाई खाना। यहाँ तक नन्दालय का दृश्य मण्डप में दिखाया जाता है।

इसके बाद लम्थोक्पा—गोचारण में जाना-होता है।

(१) कृष्ण बलराम को बीच में लेकर सखागण धीरे-धीरे चलना प्रारम्भ करते हैं।

(२) मन्दिर के बाहर पहले से ही रथसज्ज रहते हैं। और कृष्ण बलराम की मूर्तियाँ उसमें स्थापित करते हैं। चार ब्राह्मण चार कोनों में खड़े होकर चामर डुलाते हैं। कृष्ण बलराम की मूर्तियों पर एक श्वेतछत्र रहता है। दर्शक गण रथ की रस्सी पकड़कर खींचते हैं। रथ चलते समय पहले सूत्रधार धेनु चराने के गीत गाते चलते हैं। फिर गोपबालक सूत्रधार के गीत के अनुसार, होई होई करके गोचारण की भङ्गी में नाचते हैं। नाचते-नाचते चलते हैं। गोष्ठ में पहुँचने के समय तक पुनः पुनः गान की आवृत्ति होती है। वादक गण शङ्ख, मृदङ्ग इत्यादि वाद्यों को बजाते हुए चलते हैं।

(३) गोष्ठ में पहुँचने के बाद मूर्ति सहित रथ को एक बाजू में खड़ा रखते हैं। और दोनों तरफ खड़े होनेवाले गोपबालक मण्डलाकार होकर, गोष्ठभङ्गी तथा गोष्ठ वृन्दावन भङ्गी नाचते हैं। तथा चाली में खतम करते हैं।

(४) कन्दुक क्रीड़ा।

कृष्ण तथा बलराम अपने-अपने दो दल बनाकर गेंद से क्रीडा करते हैं।

(५) अनन्तर श्रीदामा विशालार्जुन को धेनुगण एकत्र करने के लिये कहते हैं। वह एकत्र करना आरम्भ करता है, इतने में धेनुकासुर अकस्मात् आक्रमण करता है। तब बलराम उसके प्राणों का अन्त करते हैं।

(६) धेनुकासुर वध के बाद पुनः कन्दुक क्रीडा करते हैं।

(७) पीछे विशालार्जुन पुनः जब धेनुगण को एकत्र करने लगता है, तब बकासुर आक्रमण करता है और कृष्ण उसका वध करते हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(८) बकासुर वध के बाद फिर से कन्दुक क्रीडा करके चाली नृत्य में समाप्ति की जाती है।

(९) उसके बाद पूजकगण कृष्ण बलराम की मूर्ति के सामने आरती करते हैं।

(१०) आरती के बाद रथ को जिस प्रकार लाया था, वैसे ही मन्दिर में वापस ले जाते हैं। सूत्रधार गोष्ठ निवृत्ति का गाना गाते हैं।

टिप्पणी—खुलाक में (अन्यान्य मन्दिरों में) रथ यात्रा करके मूर्ति ले जाने की पद्धति है। गुरुओं के मत-मतान्तरों के अनुसार स्वरूप में थोड़ा-थोड़ा अन्तर रहने पर भी क्रम यही रहता है।

उलूखल रास

इस रास का अनुष्ठान गोविन्दजी के मन्दिर में नहीं होता। भागवत के दशम स्कन्ध में इस लीला का वर्णन है। मणिपुर के गुरुओं ने इस कथा को रास का रूप दिया है। इस रास में कृष्ण के जन्म से लेकर प्रधान प्रसंग आते है। वालकृष्ण द्वारा पूतना वध, तृणावर्त का वध, तथा नारद से अभिशप्त कुवेर के पुत्रों की (नलकूबर, मणिग्रीव की) मुक्ति, कृष्ण की माखन चोरी, उलूखल वन्धन इत्यादि बाललीलाएँ दिखाई जाती हैं।

इस कहानी के वर्णन से व्रजभवन मूर्त रूप से सामने उपस्थित हुआ लगता है।

उलूखल रास का क्रम

(१) गौर चन्द्रिका।

(२) नारद के शाप से कुवेर पुत्र नलकूबर, मणिग्रीव का यमलार्जुन वृक्ष के रूप में परिणत होना।

(३) देवकी का विवाह, स्वामिगृह में जाने के समय आकाश वाणी होना, कंस के द्वारा वसुदेव देवकी का कारागृह वास।

(४) कृष्ण का जन्म, वसुदेव का श्रीकृष्ण को नन्दालय में रखने के लिये गोकुल जाना।

(५) पूतना और तृणावर्त का वध।

(६) यशोदा-रोहिणी का गीत गाकर कृष्ण-वलराम को जगाना। फिर नित्य कर्म के बाद वेषभूषादि से सजाकर दोनों को खिलाना।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(७) यशोदा-रोहिणी का कृष्ण-बलराम को नर्तन सिखाना ।

(८) यशोदा की दुग्ध दोहनादि गृहकर्म विधि ।

(९) व्रजवासियों के घर-घर श्रीकृष्ण का नवनीत चौर्य ।

(१०) दण्डरास ।

(११) मधुमंगल के साथ क्रीड़ा ।

(१२) व्रजवासियों का कृष्ण को पकड़ना और शिकायत करने के लिये यशोदा के पास ले जाना । श्रीकृष्ण का लीलावश मधुमङ्गल के रूप में बदलना और व्रजवासियों का लज्जा से संकुचित होना ।

(१३) यशोदा का कृष्ण को उलूखल में बाँधना । इसी स्थिति में उलूखल के साथ घुटनों के द्वारा रेंगते हुए वृक्षरूपधारी यमलार्जुन के पास जाना, दोनों पेड़ों के बीच में से निकलते समय, उलूखल के अटकने से पेड़ों का गिरना और दोनों का मुक्त होना ।

यह रास का प्रधान अंग है । यह रास प्रधान रूप से कार्तिक में ही होता है । फिर भी अन्यान्य समय करने में कोई प्रत्यवाय नहीं ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

८. मणिपुर की प्राचीन अध्यापन-पद्धति

नटपाला

नटपाला की शिक्षा गुरुगृह में ग्रहण करनी पड़ती थी। प्रतिदान में शिष्य गुरुओं की सेवा करते थे और स्वेच्छा से यथासंभव जो भी गुरुओं को देना हो वह देते थे। गुरु कभी भी विद्या के प्रतिदान में कुछ माँगते नहीं थे। गुरु का संतोष यही था कि शिष्य प्रसंग में विद्या का प्रशंसनीय प्रयोग करके अपनी गुरुपरम्परा का नाम रखे। जिसको ज्यादा सीखना हो और जो समर्थ हो, वह गुरु को अपने घर रखकर शक्त्यनुसार वेतन देते थे। गुरु-शिष्यभाव परस्पर प्रेमादर से और भक्ति से ही चलता था। शिष्य गुरुओं के परिसर में विनम्रभाव से रहते थे। धन का महत्त्व नहीं रहता था। कभी-कभी समूहरूप में पास-पास रहने वाले लोग एकत्रित होकर, बाहर से गुरुओं को बुलाते थे और उनसे सीखते थे। शिष्य अपने गुरु की आज्ञा बिना दूसरे गुरुओं से नहीं सीखते थे।

मृदङ्ग की शिक्षा ६-७ वें वर्ष से आरम्भ करते थे और दिन-रात सीखते रहते थे। चार-पाँच सालों में छोटा-मोटा प्रसंग बजाने के लिये अनुज्ञा मिलती थी। मृदङ्ग की शिक्षा लेने वाले करताल और गाना सीखना भी अपरिहार्य समझते थे।

करताल चलन सीखने वाले को (दुहार को) मृदङ्ग के बोल और गाना भी सीखना पड़ता था। लेकिन मृदङ्गवादन आवश्यक नहीं होता था। कभी-कभी राजा परीक्षा करने के लिये मृदङ्गवादक को गाने के लिये कहते थे, और गायक को मृदङ्ग बजाने के लिये।

शिष्यों को सिखाने के समय गुरु मुख से एक रचना बोलते और हाथ से दूसरा बोल बजा सकते थे। अथवा हाथ से एक ताल मृदङ्ग पर बजाते थे, और पैर से दूसरे ताल दिखाते थे। इससे गुरु का नैपुण्य ज्ञात होता था। गुरु दिन-रात विद्याचिन्तन में ही मग्न रहते थे। प्राकृतिक

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)
पदार्थों की गति ध्वनि इत्यादि से भी, प्रेरणा लेकर नये-नये बोलों की रचना करते थे। अपने पति की उन्नति सर्वोपरि हो, इसलिये गुरुपत्नी गृहकृत्यों का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेती थी और उसी में अपने को कृतकृत्य समझती थी। नटपाला में पुरुष बजाने जाते थे, किन्तु उसमें कोई नियत प्राप्ति नहीं होती थी।

वर्तमान में कहीं-कहीं यह प्राचीन शिक्षण-पद्धति देखने में आती है। किन्तु भिन्न-भिन्न संस्थाओं में आधुनिक पद्धति से भी सिखाया जाता है।

रास

प्रायः रास कराने वाला ही रास का सब खर्च वहन करता था। कराने वाले की लड़की कृष्ण या राधा, अथवा मकोक चिंग्वी (मुख्य सखी) बनती थी। कराने वाले गुरु को बाहर से बुलाते थे। (गुरु यहाँ रासधारी अर्थात् रासको सिखाने वाला होता था।) अपने उपनिर्वेश की ही (लत्ते की ही) लड़कियों को बुलाकर सिखाते थे। एक रास सिखाने में चार या छः महीना लगता था। रासधारी ही गाना, नृत्य, मृदङ्ग, सबको सिखाता था। रासधारी मृदङ्ग बजाते हुए, गाना और अंग-संचालन की सूचनाएँ देता रहता था। जिसको रासधारी बनना होता, वह रासधारी के घर, अथवा जहाँ रास का शिक्षण रासधारी देता था, वहाँ जाकर सीखता था। रासधारी रास प्रयोग के समय, शिष्य को साथ में बजाने का अवसर देता था। रास में नृत्य और गाने का महत्त्व समान होता।

वर्तमान में रासधारी लोग महीना भर में ही रास सिखाते हैं। सूत्रधारी और गोपियाँ जो रासमें सम्मिलित होती हैं, उनमें से कुछ निष्णात कलाकारों को धन देकर बाहर से बुलाया जाता है। इनमें प्रायः गाने वाली ही ज्यादा रहती हैं। इसलिये वर्तमान में गाने का महत्त्व बढ़ गया है और सब विषय सिखाने की आवश्यकता न होने से रासधारी का ज्ञान भी संकुचित होता जा रहा है। राधाकृष्ण के पात्र छोटी उम्र के होने के कारण कम समय में कठिन नृत्य की व्यापकता कम होती जा रही है।

अभी भी रास की प्राचीन शिक्षण-पद्धति कहीं-कहीं देखने में आती है परन्तु संस्थाओं में आधुनिक पद्धति से भी शिक्षण दिया जाता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

९. रूपक-उपरूपक

प्राचीन परम्परा के अनुसार, भरत ने नाटचशास्त्र में नाट्य का रूपक शब्द से व्यवहार किया है। उसके दस प्रकार हैं। उनके नाम हैं—नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, व्यायोग, डिम, अङ्क, समवकार, वीथि, ईहामृग। धनञ्जय के दशरूपक पर धनिककृत अवलोक टीका है उसमें रूपक का वर्णन इस प्रकार है। रूपक में एक कथा का पूरा वर्णन रहता है और वह प्रधान होता है। रस की अभिव्यक्ति वाक्यार्थाभिनय से होती है।

दशरूपक में जिनका अन्तर्भाव नहीं किया गया है जैसे डोम्बी, श्रीगदित, भाण, भाणी, प्रस्थान, रासक, काव्य। इन सातों को धनिक ने नृत्यभेद कहा है।

ये रूपक से भिन्न हैं, और भावाश्रित होते हैं। भाव की अभिव्यक्ति पदार्थाभिनय से होती है। इसमें चारों अभिनयों में से आङ्गिकाभिनय प्रधान रहता है।

इन नृत्यभेदों को किसी-किसी ने उपरूपक नाम से भी लिखा है। कुछ ग्रन्थकारों ने इन सातों के अतिरिक्त और भी उपरूपकों का उल्लेख किया है जिनका वर्णन तत्तत् स्थलों में विस्तार से किया गया है। इनमें नृत्यभेद भी हैं, और नृत्यगीत प्रधान लघुभूत नाटक भी रहते हैं।

भरत ने अपने नाटचशास्त्र में उपरूपक का उल्लेख नहीं किया है, इससे उनके समय में नृत्यभेद (उपरूपक) प्रचलित नहीं थे, ऐसा अनुमान नहीं हो सकता। क्योंकि भरत के ही निकटवर्ती वात्स्यायन ने कामसूत्र में हल्लीसक, नाट्यरासक, (लाटरासक) इत्यादि का उल्लेख किया है।

भरत के सौ पुत्रों में से एक कोहल था। उसका उल्लेख करके भरत ने लिखा है "शेषमुत्तरतन्त्रेण कोहलस्तु करिष्यति" (नाट्यशास्त्र अन्तिम अध्याय) नाट्यशास्त्र से अवशिष्ट विषय का विवेचन कोहल करेगा, और अभिनव गुप्त ने नाट्यशास्त्र के चतुर्थाध्याय की टीका में 'यथोक्तं कोहलेन'

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कहकर रागकाव्य नामक उपरूपक का लक्षण दिया है। वैसे ही पहले अभिनवगुप्त ने "तदुक्तं चिरन्तनैः" कहकर दशरूपक के अतिरिक्त डोम्बिकादि प्रकार दिये हैं और ये नृत्तात्मक प्रबन्ध हैं, नाटकादि से विलक्षण नहीं हैं, ऐसा कहा है। 'तदुक्तं चिरन्तनैः' यहाँ चिरन्तन शब्द से विवक्षित ग्रन्थकारों में कोहल की भी विवक्षा हो सकती है। ऐसा दीखता है कि ये उपरूपक के प्रकार प्रथम नृत्तभेद शब्द से ही व्यवहृत होते थे, कथा और अभिनय का संबंध होने पर भी कथादि का प्राधान्य नहीं था। इसीलिये अभिनव गुप्त ने टीका में उपरूपकों का उल्लेख करके कहा "एवमिदं नृत्तं सप्ताकृति प्रकारैर्भगवत एव प्रवृत्तम् तथाहि शुद्धमेव नृत्तं रेचकाङ्गहारात्मकं ततो गीतकाद्यभिनयोन्मुखं—इत्याद्युक्तम्"।

इससे नृत्त का ही विकसित स्वरूप, तीन रूप में उपस्थित हुआ—(१) केवल नृत्त रचनाएँ, (२) नृत्य रचनाएँ (३) और नृत्य-गीत प्रधान लघु नाटक। लघु नाटक में—नाटक के घटक अंगों का (अङ्क, सन्धि, नट, नायक, नायिका, रस, वृत्ति आदि का) आविष्कार हुआ।

भोज तथा अभिनव गुप्त ने हल्लीसक का लक्षण 'मण्डलाकार स्त्रियों के बीच एक पुरुष रहता है, और वे नृत्त करते हैं' ऐसा दिया है। उत्तरकालीन ग्रन्थकार सागरनन्दी, शारदातनय और विश्वनाथ इत्यादि ने हल्लीसक में सात से दस नायिकाएँ, एक अङ्क, कैशिकी वृत्ति, दो सन्धि, और ताललयानुसारी विशिष्ट संगीत रहता है, ऐसा वर्णन किया। वैसे ही भोज के मत से, 'गोष्ठी' में गोष्ठगत श्रीकृष्ण लीला तथा असुर-संहार का वर्णन होता है।

शारदातनय और विश्वनाथ के मतानुसार गोष्ठी में एक अङ्क, मर्यादित-शृङ्गार, पाँच या छः नायिका, नौ या दस सामान्य पुरुष, गर्भविमर्शसन्धि का अभाव, वाणी में उदात्तता नहीं रहती, मृदु, कैशिकी वृत्ति होती है, और उसमें रसान्तर नहीं होता, कृष्ण का गोष्ठ-विहार और यमलार्जुनादि दानवों का वधवर्णन होता है।

भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में उपरूपक की संख्या भिन्न-भिन्न मिलती है।

[1]हरिवंश में (छठी सदी में)—हल्लीसक, छालिक्य, इन दो नृत्तभेदों का वर्णन है।

---

१. हरिवंशपुराण—प्रथम परिशिष्ट २९ डी.।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

[1]अग्निपुराण में (सातवीं सदी में) १७ उपरूपकों का उल्लेख है। नाटिका, सट्टक, शिल्पक, कर्ण, एक, दुर्मल्लिका, प्रस्थान, भाणिका, भाण, गोष्ठी, हल्लीसक, काव्य, श्रीगदित, नाट्यरासक, रासक, उल्लाप्यक, प्रेक्षण उनके नाम हैं।

[2]दशरूपक की टीका में धनिक ने (दसवीं सदी में) सात नृत्तभेद डोम्बी, श्रीगदित, भाण, भाणी, प्रस्थान, रासक, काव्य, इन नामों से कहा है।

[3]नाट्यशास्त्र की अपनी टीका में अभिनव गुप्त ने (दसवीं सदी के अन्त में) दस नृत्तभेद (उप रूपक) कहे हैं। जिन्हें डोम्बिका, भाण, प्रस्थान, षिद्गक, भाणिका, प्रेरण, रामाक्रीड़, हल्लीसक, रासक, रागकाव्य, इन नामों से कहा है। जो सात नृत्त प्रकारों में भी गतार्थ हो सकते हैं, ऐसा लिखा है।

[4]नाटकलक्षणरत्नकोष में सागरनन्दी ने (दसवीं और बारहवीं सदी के बीच में) १४ उपरूपक कहा है, गोष्ठी, संल्लाप, शिल्पक, काव्य, हल्लीसक, श्रीगदित, भाणिका, भाणी, दुर्मल्लिका, प्रेक्षणक, सट्टक, रासक, नाट्यरासक, उल्लाप्यक उनके नाम हैं।

[5]शृङ्गारप्रकाश में भोज ने (ग्यारहवीं सदी में) १२ उपरूपकों के नाम इस प्रकार कहे हैं :—श्रीगदित, दुर्मल्लिका, प्रस्थान, काव्य, भाण, भाणिका, गोष्ठी, हल्लीसक, नर्तनक, प्रेक्षणक, रासक, नाट्यरासक।

[6]भावप्रकाश में शारदातनय ने (१२, १३ सदी में) २० उपरूपक नृत्यभेद शब्द से कहे हैं। त्रोटक, नाटिका, गोष्ठी, सँल्लाप, शिल्पक, डोम्बी, श्रीगदित, भाण, भाणी, प्रस्थान, काव्य, प्रेक्षण, नाट्यरासक, रासक,

---

१. अग्निपुराण—अध्याय ३३८ नाटकनिरूपणम्।

२. दशरूपक की धनिककृत टीका—'दशरूपकम्' व्याख्याकार डॉ० भोलाशंकर व्यास (संस्करण १९५५), पृष्ठ ५।

३. नाट्यशास्त्र की अभिनवगुप्त कृत टीका—'नाट्यशास्त्र', गायकवाड ओरिएन्टल सीरीज संस्करण १९२६, पृष्ठ १८३।

४. नाटकलक्षणरत्नकोश—व्याख्याकार बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, पृष्ठ २८७।

५. शृङ्गारप्रकाश—संपादक डॉ० राघवन, पृष्ठ ५४६।

६. भावप्रकाशन—नवम अधिकार, पृष्ठ २५५।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उल्लाप्यक, हल्लीसक, दुर्मल्लिका, कल्पवल्ली, मल्लिका, पारिजातक, इन नामों से वे प्रसिद्ध हैं।

[1]साहित्यदर्पण में विश्वनाथ ने (चौदहवीं सदी में) उपरूपक शब्द से १८ भेद कहे हैं—नाटिका, त्रोटक, गोष्ठी, सट्टक, नाट्यरासक, प्रस्थान, उल्लाप्य, काव्य, प्रेङ्खण, रासक, संलापक, श्रीगदित, शिल्पक, विलासिका, दुर्मल्लिका, प्रकरणी, हल्लीश, भाणिका।

[2]संगीत दामोदर में पं० शुभङ्कर ने (१५ वीं सदी में) उपरूपक नाम से १७ भेद लिखे हैं।

उनके नाम हैं—नाटिका, प्रेक्षण, तोटक, शाटक, गोष्ठी, संल्लाप, शिल्प, भाणी, हल्लीश, रासक, उल्लापक, श्रीगदित, प्रस्थान, नाट्यरासक, दुर्मल्लिका, लासिका, काव्य।

नाटकचन्द्रिका में रूपगोस्वामी ने (सोलहवीं सदी में) दानकेलि कौमुदी नामक भाणिका का उदाहरण दिया है। इससे सिद्ध है कि उपरूपक उनको मान्य थे।

[3]नाट्यदर्पण में रामचन्द्र गुणचन्द्रसूरी ने (१३ वीं सदी में) रूपक के अतिरिक्त १३ अन्य रूपक कहे हैं—सट्टक, श्रीगदित, दुर्मिलित, प्रस्थान, गोष्ठी, हल्लीसक, शभ्या, प्रेक्षणक, रासक, नाट्यरासक, काव्य, भाण, भाणिका।

१६ वीं सदी से गौडीय वैष्णव संप्रदाय के श्री रूप गोस्वामी, जीव गोस्वामी, कृष्णदास कविराज इत्यादि ने अपने ग्रन्थ में, तथा पद्यों में हल्लीसक रासक का, रासलीलाओं के अन्तर्गत, नृत्यभेद के रूप में वर्णन किया है।

मणिपुर में उपलब्ध १८ वीं सदी का ग्रन्थ गोविन्दसङ्गीतलीला-विलास के अनुसार, नाट्य के रूपक और रासक दो भेद किये हैं। रूपक के १० प्रकार प्राचीन ग्रन्थकारों के अनुसार ही लिखे हैं।

रासक में कथा प्रसङ्ग के अनुसार अभिनय मुख्य होता है। नृत्यगीत उसमें प्रधान माने जाते हैं। संलाप संवाद इत्यादि गौण रहते हैं।

---

१. साहित्यदर्पण—परिशिष्ट ६, पृष्ठ २७२।

२. संगीतदामोदर—पं. शुभङ्कर, चतुर्थ स्तवक, पृष्ठ ७९।

३. हिन्दी नाट्यदर्पण, संपादक डॉ० नगेन्द्र, संस्करण १९६१, पृष्ठ ४०४।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

विषय भेद से रासक छः प्रकार के हैं—महारास, मञ्जुरास, नित्यरास, निर्वेश, गोपरास, तालरास।

इन रासकों में विभिन्न नाट्य विषयक ग्रन्थों में कहे हुए हल्लीसक, गोष्ठी, रासक नामक नृत्य भेदों का समावेश होता है। उत्तर कालीन ग्रन्थों के अनुसार, ये सब रासक नृत्य-गीत प्रधान लघु नाट्य, अत एव उपरूपक होते हैं।

प्राचीन नृत्तभेद की परम्परा में, कुछ नृत्तभेद विकसित होकर, विभिन्न रचनाओं द्वारा, नृत्त-नृत्यबन्ध, नृत्त-नृत्यप्रबंध के रूप में, और कुछ उपरूपक के रूप में परिणत हुए।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१०. मण्डप की उपवेशनादि प्रणाली

शास्त्रों में रङ्गालय में उपवेशन के स्थान नियत किये गये हैं। फिर भी देशभेद और रुचिभेद से इसमें भिन्नता उपलब्ध होती है। रास और नटपाला के प्रसङ्ग में नियम के अनुसार मण्डप में यथास्थान सभ्य बैठते हैं।

गोविन्दजी[1] का मन्दिर पश्चिम में होने से मन्दिर की दाहिनी तरफ पश्चिम दक्षिण में (नैऋत्यकोण में) पूर्वाभिमुख होकर सभापति (मण्डपमपू या कीर्तनमपू) एक ब्राह्मण बैठते हैं। पश्चिमोत्तर कोण में मृदङ्गवादक और शंखवादक पूर्वाभिमुख बैठते हैं। उनके पास उत्तर कोण में वंशीवादक और सूत्रधारिणी स्त्रियाँ दक्षिणाभिमुख होकर बैठती हैं और इतर वादक सूत्र-धारिणियों की बाईं तरफ बैठते हैं। सूत्रधारिणियाँ मञ्जीरा बजाकर ताल नियन्त्रित करतीं हैं। मृदङ्ग का मुख्य वादक दाहिनी तरफ बैठता है।

महाराजाजी के उपस्थिति में दक्षिण में मध्य भाग में लाल आसन पर उत्तराभिमुख होकर स्वयं राजा मण्डपमपू का स्थान लेते हैं। (मण्डपमपू = सभापति)। राजा के दोनों तरफ, मन्त्रियों के स्थान पर पदवीधारी ब्राह्मण लोग बैठते हैं। राजा का पितृकार्य हो तो राजा उत्तरपश्चिम में एक छोटे आसन पर या आसन रहित ही बैठते हैं। क्योंकि राजा को राजवैभव छोड़कर, सेवाभाव से नम्रतापूर्वक रहना पड़ता है। उस समय सभापति ब्राह्मण होता है। वह पूर्वाभिमुख बैठता है। महाराजा दक्षिण में विराजित हों तो मृदङ्ग वादकों के कुछ पीछे महारानी जी आसन पर पूर्वाभिमुख बैठती हैं। महारानी के पीछे अन्य रानियाँ बैठती हैं।

खुलाक में (गांव के इतर मन्दिरों में) महारानी जी का आसन उत्तर में होता है। वह दक्षिणाभिमुख और राजा के सम्मुख बैठती हैं। दक्षिण पश्चिम कोने में पश्चिमाभिमुख होकर महाराजा की माता बैठती हैं।

---

१. मैतै जगोई—भाग २, श्री सुराचान्द शर्मा, पृष्ठ २१।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

दक्षिण में राजा की दाईं और वाईं तरफ, ब्राह्मणों के पीछे कलाकार गुरु लोग और प्रेक्षकगण बैठते हैं। इसी तरह उत्तर के मध्य से लेकर पश्चिम की तरफ अन्त तक स्त्रियाँ बैठती हैं।

महाराजा के पदाधिकारी और उनकी स्त्रियाँ मण्डप में अपनी-अपनी योग्यतानुसार पङ्क्तियों में सम्मुख होकर बैठती हैं और इतर सब लोग जगह न हो तो पीछे की पङ्क्तियों में योग्यतानुसार बैठते हैं।

नटमण्डप में रासस्थल बाँस की संवृति से युक्त छोटा मण्डलाकार होता है जिसका प्रवेश द्वार मन्दिर के सम्मुख रहता है। वृन्दावन का अनुकरण करने के लिये लता, वल्ली, पल्लवादि, तथा कागज की विविधि चित्रावालियों से रासस्थल सजाया जाता है।

मन्दिर के सम्मुख पूर्व दक्षिण उत्तर में दर्शक गण बैठते हैं।

उपरोक्त पद्धति में देशकाल भेद से कहीं-कहीं व्यतिक्रम भी देखा जाता है।

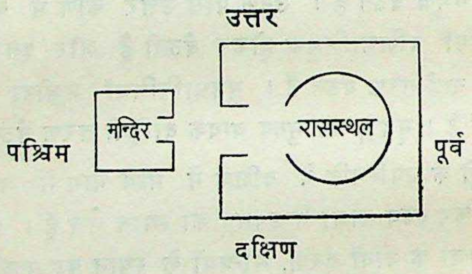

(पश्चिम में मन्दिर और मण्डप के मध्य में गोलाकार पश्चिमाभिमुख रासस्थल होता है।

नटमण्डप चतुष्कोण और ऊपर से ही आच्छादित होता है। चारो ओर आवरण नहीं होता।)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

११. मणिपुरी वैष्णव साहित्य में रस और नायक-नायिका

वैष्णव साहित्य में एकमेवाद्वितीय नायक श्रीकृष्ण होते हैं। उनका वर्णन जगत् का एक मात्र सर्वश्रेष्ठ पुरुष, अतएव पुरुषोत्तम शब्द से किया जाता है।

शास्त्रानुसार नायक चार प्रकार के होते हैं: धीरोदात्त, धीरललित, धीरप्रशान्त, धीरोद्धत। श्रीकृष्ण धीर ललित हैं, अतएव नायक चूडामणि भी हैं। वे षड्गुणैश्वर्य सम्पन्न हैं। नायक शब्द नी धातु से बना है। उसका अर्थ प्राप्त कराना है।

मणिपुरी नृत्य का यह नायक, चतुर, चिर किशोर, हास्यरसोत्पादक, दाक्षिण्यमय और अपनी भक्त प्रेयसियों का वशीभूत होता है। वैष्णवगण परमैश्वर्य सम्पन्न भगवान् श्रीकृष्ण को निखिल गुणाधार, सकल सौन्दर्यास्पद रूप में वर्णन करते हैं। उनके अगणित गुण, संख्या से या स्वरूप से भी अवर्णनीय हैं।

रूप और गुणों से कृष्ण का आनुकूल्य होने से जो कृष्ण भोग्या है जिसका प्रेम और माधुर्य संपत्, समस्त भक्तों के लिये अनुकरणीय है, ऐसी सब कृष्ण-प्रेमास्पद (गोपियाँ) वैष्णव साहित्य में नायिकात्वेन स्वीकृत हैं।

शास्त्रानुसार नायिकाओं के दो प्रकार हैं—स्वकीया और परकीया। स्वकीया नायिका विधि पूर्वक परिणीता होती है। परकीया वह है जो पिता, पति इत्यादि के आधिपत्य में है। गौडीय वैष्णव धर्म में परकीया रूप में ही नायिका रहती है।

मणिपुर के रास में नायिका के रूप में राधा सम्मानित हैं। परम प्रिय भगवान् के साथ तादात्म्य से भक्त का काया-वाचा-मनसा समर्पण का उदाहरण अन्यत्र भक्तों में दुर्लभ है। सहिष्णुता की प्रतिमा, रासनायिका श्रीराधा परकीया उत्तम नायिका मानी जाती हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उनके वाद प्रतिस्पर्धिनी नायिका के रूप में चन्द्रावली का दूसरा स्थान है।

साहित्य शास्त्र में रस की प्रक्रिया जिस प्रकार वर्णित है, उसमें वैष्णव साहित्य में राधाकृष्ण के प्रेम को प्राधान्य देकर वीर, करुणादि को भक्तिरस का अङ्ग बनाया है।

भगवान् के विषय में भक्ति रस का स्वरूप अलौकिक रहता है।

मानव की विभिन्न भावनाओं का पृथक्करण करके शास्त्रकारों ने प्रधान भावनाओं को ९ रसों में विभक्त किया है—शृङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्‌भुत और शान्त।

शृङ्गार उभय संवेद्य होने पर भी अन्तर्बाह्य विस्मृति पैदा करता है (यथा प्रियया स्त्रिया संपरिष्वक्तो बाह्यं किं च न वेदनान्तरम्) वीर रस में उभय संवेद्यता होने पर भी प्रतियोगी का भान रहता है। तदितर की विस्मृति होती है।

वैष्णव साहित्यिकों ने इन रसों में से शृङ्गार को ही मधुर रस के रूप में मुख्य और प्रथमत्वेन वर्णन किया है। शृङ्गार में स्त्री विषयक रति स्थायी भाव होता है। मधुरा भक्ति रस में भगवद्विषयक रति स्थायी भाव है। उनके मत में आनन्द स्वरूप भगवान् ही रससर्वस्व रसरूप है। ('रसो वै सः इति श्रुतिः)।

भक्ति को रस मानने पर कृष्ण विषयक उसकी रति स्थायी भाव है। मणिपुरी लोग भक्तिमार्गानुसारी होने से भक्ति रस के प्रसिद्ध १२ प्रकारों को मानते है। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, माधुर्य—ये पाँच मुख्य रस हैं और हास्य, अद्‌भुत, वीर, करुण, रौद्र भयानक, बीभत्स—ये सात तदङ्गभूत गौण रस मानते हैं।

(साहित्यिक लोग परम्परा से भक्ति को रस नहीं मानते। भावविशेष मानते हैं। वैष्णव लोग भक्ति ही को एकमेव रस मानकर अन्य रसों को उसके अङ्गभूत मानते हैं। भक्ति रस में कृष्ण रति स्थायी भाव है और अद्‌भुत, करुण इत्यादि व्यभिचारी भाव की तरह उसके अङ्ग माने गए हैं। इस लिये वे गौण रस कहे जा सकते हैं। नन्द, वसुदेव, देवकी, यशोदा, गोप-गोपियों में श्रीकृष्ण के प्रति रति है। कृष्ण का कंस से संघर्ष और शकटासुर, धेनुकासुर, पूतना इत्यादि के प्रसङ्ग में प्रेमास्पद व्यक्ति के मन

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)
में स्वस्व प्रकृत्यनुसार करुण, वीर, अद्भुत इत्यादि गौण रस जनित भाव पैदा होते हैं। उस समय श्रीकृष्ण-भक्ति रहते हुए, ये इतर रस प्रसङ्ग से गौण रूप में प्रकट होते हैं। श्रीकृष्ण भक्ति प्रधान है और इतर प्रसङ्गागत गौण हैं।)

रस प्रक्रिया—विभावेनानुभावेन व्यक्तः सञ्चारिणा तथा।
रसतामेति रत्यादिः स्थायीभावः सचेतसाम्॥

रत्यादि स्थायी भाव, विभावादि के संयोग से व्यक्त होकर रसरूप धारण करता है। शृङ्गार रस में रति स्थायी भाव (बीजभूत) है। नायक नायिकाएँ परस्पर आलम्बन विभाव (रस का मुख्य आधार) हैं। चन्द्र, चन्दन, भ्रमर, एकान्त, पिकरुत (कोकिल कूजन), वन श्री इत्यादि उद्दीपन विभाव (उत्कर्षक कारण) हैं। उग्रता, मरण, आलस्य, जुगुप्सा को छोड़कर इतर लज्जा, हास इत्यादि संचारी या व्यभिचारी भाव (परिस्थितिवश उत्पन्न होकर नष्ट होनेवाला) हैं। स्तम्भ, चुम्बन, कम्पादि अनुभाव हैं। (इन्हीं अनुभावों को सात्विक भाव कहते हैं। विभाव कारण है और अनुभाव कार्य है।) शृङ्गार रस के देवता विष्णु श्याम वर्ण हैं। शृङ्गार दो प्रकार का होता है—विप्रलम्भ, संभोग। नायक नायिका के परस्पर वियोग में अभीप्सित आलिङ्गनादि की प्राप्ति की तीव्र उत्कण्ठा होती है। ऐसा विप्रलम्भ शृङ्गार है। दर्शनालिङ्गन, संभाषण, स्पर्शादि में जो सुखातिरेक और उल्लास होता है, उसे संभोग कहते हैं।

विप्रलम्भ और संभोग दोनों चार प्रकार के हैं और वे फिर प्रत्येक आठ प्रकार के हैं। इस प्रकार शृङ्गार के चौसठ भेद वैष्णव साहित्य में वर्णित हैं।

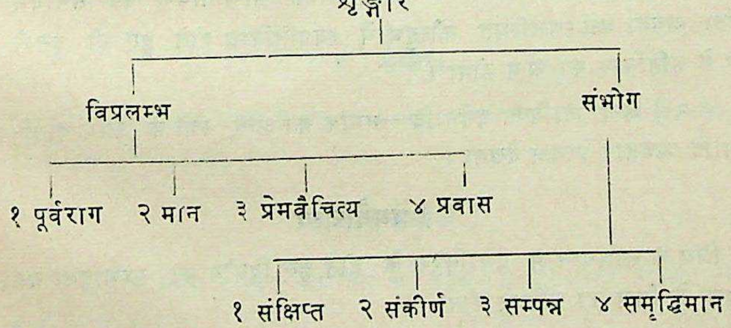

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(१) पूर्वराग

नायक-नायिका के रूपगुणादि श्रवण अथवा दर्शन मात्र से उत्पन्न होने वाली रति ही पूर्वराग है। जैसे (१) श्रीकृष्ण का साक्षाद्दर्शन, (२) चित्रपट दर्शन, (३) स्वप्न दर्शन, (४) वन्दिमुख श्रवण, (५) दूतीमुख श्रवण, (६) सखीमुख श्रवण, (७) संगीत श्रवण, (८) वंशीध्वनि श्रवण इत्यादि कारणों से पूर्वराग उत्पन्न होता है।

(२) मान

एक स्थान पर दोनों पास होने पर अनुरक्त होते हुए भी नायक-नायिका के अभीष्ट दर्शनालिङ्गनादि में प्रतिबन्धक स्वाभिमान विशेष को मान कहते हैं। तात्कालिक रोषमूलक स्वाभिमान विशेष और तन्मूलक पराङ्मुखता यही मान का कार्य है। उसके आठ निमित्त इस प्रकार हैं।

(१) सखीमुख श्रवण—नायक प्रतिस्पर्धी नायिका में आसक्त है, ऐसा सखी मुख से सुनना।

(२) शुकमुख श्रवण—तोते के मुख से सुनना।

(३) मुरली ध्वनि श्रवण—मुरली की ध्वनि में दूसरी नायिका के नाम का आभास होना।

(४) विपक्ष कृत गात्रभोगाङ्क—प्रतिनायिका के शरीर पर भोग के चिह्न देखना।

(५) प्रियगात्र भोगाङ्क—नायक के अङ्ग पर भोग चिह्नों को देखना।

(६) गोत्रस्खलन—अनवधान से नायिका के सामने दूसरी नायिका का नाम नायक के द्वारा लिया जाना।

(७) स्वप्नदर्शन—स्वप्न में अन्य स्त्री के साथ नायक का समागम देखना अथवा वक्षःस्थलस्थित कौस्तुभ में स्वप्रतिबिम्ब होते हुए भी दूसरी स्त्री के प्रतिबिम्ब का भ्रम होना।

(८) अन्य नायिका दर्शनादि—नायक का अन्य स्त्री के साथ वार्तालापादि व्यवहार प्रत्यक्ष देखना।

(३) प्रेमवैचित्य

प्रिय के सन्निधान में प्रेमातिरेक के होते हुए वियोग की सम्भावना या कल्पना से चित्त का अस्थिर होना।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वैष्णव ग्रन्थों से इस विषय में आक्षेपानुराग का ही वर्णन है।

(१) श्रीकृष्ण के प्रति आक्षेप—स्थलान्तर में होने से न मिलने के कारण राधा कृष्ण पर आक्षेप करती हैं।

(२) मुरली के प्रति आक्षेप—मुरली ध्वनि से राधा विह्वल होकर कृष्ण पर आक्षेप करती हैं।

(३) निज प्रति आक्षेप—प्रथम नायक से प्रेम होने से आनन्दित होती है। बाद में प्रेम की तीव्रता बढ़ने से अति व्याकुल होती हैं और अशान्ति में स्वयं अपनी निन्दा करती हैं।

(४) सखी के प्रति आक्षेप—नायक के साथ प्रेम करने से दूसरी सखियाँ और लोग राधा की निन्दा करते हैं। राधा कृष्ण से सखी निन्दा सुनाकर स्त्रियों पर आक्षेप करती हैं।

(५) दूती के प्रति आक्षेप—नायक के सौन्दर्य का वर्णन दूती ने किया इसलिये नायिका प्रेम में मग्न हुई। अतएव दूती पर अपने दुःख का आक्षेप करती है कि तुम मेरे दुःख का कारण हो।

(६) विधाता के प्रति आक्षेप—हे विधाता, तुमने नायक के साथ मिलन कराकर मुझे दुःखी बनाया। मेरी इच्छा से मिलने में तुम ही प्रतिबन्ध करते हो।

(७) कंदर्प के प्रति—हे कामदेव ! तुमने अपने पञ्च बाणों से आघात करके मुझे दुःखी बनाया।

(८) गुरुजनों के प्रति आक्षेप—जटिला, कुटिलादि गुरुजन नायक के प्रति मिलने में प्रतिबन्ध करते हैं। उससे क्रुद्ध होकर, दुःखी होकर घर छोड़ना चाहती है।

(४) प्रवास

नायक के विदेश गमन से वियोग। वह दो प्रकार का होता है—समीप का प्रवास और दूर का।

समीप प्रवास

(१) कालिया दमन—कालिया के साथ युद्ध की वार्ता सुनकर राधा दुःखी होती हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(२) गोचारण—गायों को लेकर वन में जाने से राधा को सान्निध्या-भाव का दुःख होता है।

(३) नन्दमोक्ष—नन्द राजा को बचाने के लिये कृष्ण का पानी में कूदना सुनकर अनिष्ट सम्भावना से दुःखी होना।

(४) कार्यानुरोध—काम के लिये बाहर जाने से।

(५) अन्तर्धान—रासमहोत्सव में बीच में ही कृष्ण अन्तर्हित हो जाते हैं।

दूरस्थ प्रवास

(६) भावी प्रवास—कृष्ण को ले जाने के लिये अक्रूर का आना, उस समय भावी विरह की संभावना से दुःखी होना।

(७) भवन् प्रवास—मथुरागमन—प्रभात काल होते ही अक्रूर कृष्ण-बलराम को मथुरा ले जाते हैं।

(८) भूतप्रवास—कृष्ण द्वारका गये, इस बात को सुनकर दुःखी होना।

संभोग शृङ्गार

(१) संक्षिप्त

पूर्वराग के बाद प्रथम मिलन, लज्जा संकोचादि के कारण संक्षेप।

(१) बाल्यावस्था में मिलन।
(२) गोष्ठ में गमन।
(३) गोदोहन।
(४) अकस्मात् चुम्बन।
(५) हस्ताकर्षण।
(६) वस्त्राकर्षण।
(७) पथरोध।
(८) रति भोग।

(२) संकीर्ण

मानोत्तर मिलन में मिश्रभाव होते हैं। नायक की भूतपूर्व वञ्चना से कुछ रोष शृङ्गार की आसक्ति से प्रीति।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(१) महारास ।
(२) जल केलि ।
(३) कुञ्जलीला ।
(४) हावलीला ।
(५) बंसी चोरी ।
(६) नौका विलास ।
(७) मधुपान ।
(८) सूर्यपूजा ।

(३) सम्पन्न संभोग–प्रवासोत्तर मिलन

(१) सुदूर दर्शन ।
(२) झूलन ।
(३) होली ।
(४) प्रहेलिका ।
(५) पाशा खेला ।
(६) नर्तकरास ।
(७) रसालसता ।
(८) कपट निद्रा ।

(४) समृद्धिमान्

सुदूर प्रवास के पारतन्त्र्य के कारण जहाँ दर्शन भी दुर्लभ है, ऐसी दशा में प्रवासोत्तर अत्युत्कण्ठित नायक-नायिकाओं का विघ्नशमन के बाद परम अनुराग से एकान्त में विश्वस्त, विनिर्मुक्त, सीमातीत मिलन हो समृद्धिमान् संभोग है ।

(१) स्वप्न विलास ।
(२) कुरुक्षेत्र मिलन ।
(३) भावोल्लास ।
(४) व्रजगमन ।
(५) विपरीत संभोग ।
(६) भोजन कौतुक ।
(७) सहशयन ।
(८) स्वाधीन भर्तृका ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ये उपरोक्त ६४ प्रकार मणिपुर की पदावलियों में वर्णित हैं। इन पदावलियों का संग्रह महाराजा चन्द्रकीर्ति के समय में किया गया। संकीर्तन के समय उनका प्रयोग किया गया। उनको 'रसफाङ्ग्नवा' के नाम से जाना जाता है। शृङ्गार रस के प्रसङ्ग में वर्णित नायिकाओं के ८ मुख्य प्रकार हैं और उनमें प्रत्येक के ८, ८ प्रकार हैं। वे 'नायिकारत्नमाला' इत्यादि वैष्णव साहित्य में वर्णित हैं।

अभिसारिका

नायिका कान्त से अभिसार कराती है या स्वयं अभिसरण करती है।

(१) ज्योत्स्नाभिसारिका—(चाँदनी में अभिसार करने वाली)
(२) तामसाभिसारिका—(अंधकार में अभिसार करने वाली)
(३) वर्षाभिसारिका—(वर्षा में अभिसार करने वाली)
(४) दिवाभिसारिका—(दिन में अभिसार करने वाली)
(५) कुज्झटिकाभिसारिका—(कुहरे में अभिसार करने वाली)
(६) तीर्थयात्राभिसारिका—(तीर्थयात्रा में अभिसार करने वाली)
(७) उन्मत्ताभिसारिका—(वंसी ध्वनिमूलक)
(८) असमञ्जसा—(विपरीतशृङ्गारमूला)

State Museum Library Lucknow

वासकसज्जा

प्रियतम के आगमन की प्रतीक्षा में वासगृह (कुञ्जादि) सजाती है और अपना शरीर भी अलङ्कृत करती है।

(१) मोहिनी—(मोह उत्पन्न करने वाली)
(२) जागृतिका—(जगने वाली)
(३) रुदिता—(नायकागमन के विलम्ब के कारण रुदन करने वाली)
(४) मध्योक्तिका—(कान्त शब्द शुश्रूषा से आलाप)
(५) सुप्तिका—(कृतक सुप्ता)।
(६) चकिता—(स्वप्रतिबिम्ब में नायकागमन भ्रम)
(७) सुरसा—(संगीतोन्मत्ता)
(८) उद्देशा—(नायक के उद्देश्य से दूती प्रेषिका)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

उत्कण्ठिता

प्रिय के आगमन में विलम्ब देखकर उत्सुकता से चिन्ता करने वाली।

(१) दुर्मति—(प्रिय नायक के विश्वास से पश्चात्ताप दग्ध)

(२) विकला—(परितापयुक्ता)

(३) स्तब्धा—(चिन्तिता)

(४) उच्चकिता—(मर्मरादि शब्द से प्रियागमन शङ्काशालिनी)

(५) अचेतना—(दुःख से विमनस्क)

(६) सुखोत्कण्ठिता—(नायक के ध्यान में मग्न, गुणकथनशालिनी)

(७) मुखरा—(दूती के साथ वृथा कलहकारिणी)

(८) निर्बन्धा—(स्वकर्म दोष से खेद करने वाली)

विप्रलब्धा

संकेतानुसार न आने वाले प्रियतम की चिन्ता से ग्रस्त।

(१) विकला—(कान्त के न आने से सब व्यर्थ मानने वाली)

(२) प्रेममत्ता—(दूसरी नायिका से मिलन की आशङ्का करने वाली)

(३) संक्लेशा—(विरह के कारण सब शून्य मानने वाली)

(४) विनीता—(विलापिनी)

(५) निर्दया—(कान्त पर निर्दयत्वारोप करके खिन्न)

(६) प्रखरा—(अग्नि में या यमुना में वेषभूषा का त्याग करने में तत्पर)

(७) दूत्यादरा—(दूती के प्रति आदर युक्त)

(८) भीता—(प्रभात देखकर भययुक्ता)

खण्डिता

पूर्वसंकेत पर न आकर, अन्य नायिका के साथ किये हुए संभोग चिह्नों से युक्त नायक को सवेरे लौटा हुआ देखकर, नायिका का ईर्ष्या, क्रोध, अपमान से ग्रस्त होना।

(१) निन्दक—(कान्त की निन्दा करने वाली)

(२) क्रुद्धा—(अनुनय करने वाले कान्त का तिरस्कार करने वाली)

(३) भीता—(सिंदूर कज्जलान्वित कान्त को देखकर भीता)

(४) प्रगल्भा—(कान्त के साथ कलहरत)

(५) मध्या—(अन्य नायिका संभोग चिह्नों से लज्जान्विता)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(६) मुग्धा—(रोष वाष्पयुक्ता मौनधारिणी कातरा)

(७) कम्पिता—(अमर्ष के कारण रुदन करने वाली)

(८) संतप्ता—(भोगचिह्नाङ्कित नायक दर्शन से क्रुद्धा)

कलहान्तरिता

नायिका के प्रत्याख्यान से नायक के चले जाने पर पश्चात्तापकारिणी।

(१) आग्रहा—(आग्रहशील नायक के त्याग से पश्चात्तापयुक्ता)

(२) शुद्धा—(पादपतित नायक को क्यों दुर्वचन कहा, ऐसा पश्चात्ताप करने वाली)

(३) धीरा—(पादपतित नायक के दर्शन से क्यों वञ्चित रही, ऐसा पश्चात् सोचने वाली)

(४) अधीरा—(सखीतिरस्कृता। नायक के अवमान के बाद नायिका का तिरस्कार सखी करती है। तब वह अधीर होती है)

(५) कुपिता—(कान्त के मिथ्या भाषण से कोपयुक्ता)

(६) समा—(कान्त के अपराध करने पर, केवल उसका दोष न मानकर, दूती का, अपने स्वभाव का, समय का और भाग्य का दोष मानने वाली)

(७) मृदुला—(परिताप से रोने वाली)

(८) विधुरा—(सखी से आश्वासित)

प्रोषितभर्तृका

कान्त का प्रवास होने से नायिका प्रोषितभर्तृका।

(१) भावी—(कान्त प्रवास में जाएगा, यह सुनकर दुःखी)

(२) भवन्—(कान्त के प्रवास मूलक वर्तमान विरह से दुःखी)

(३) भूत—(प्रवासोत्तर दुःखी। कान्त के मथुरादि जाने पर)

(४) स्मरदशाक्रान्ता—(चिन्ता, जागरण, उद्वेग, कृशता, जड़ता, प्रलाप, व्याधि, उन्माद, मोह, मरण इत्यादि दशाओं में स्थित)

(५) दूतसंवाद—(उद्धवादि से नायक की वार्ता सुनना)

(६) विलापिनी—(विलाप करने वाली)

(७) सखी संवादिनी या सख्युक्तिका—(जो सखी द्वारा कान्त के पास विरहवेदना वर्णन करे)

(८) भावोल्लासिनी—(जिसमें भावनाओं की तरङ्गें उछल रही हैं)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

स्वाधीन भर्तृका

जिसका कान्त नायिका के वशीभूत होकर सर्वदा पास रहता है।

(१) कोपना—(विलास में व्याजयुक्त रोष करने वाली)

(२) मानिनी—(नायक के शरीर में परकृत भोगचिह्न देखकर मान करने वाली)

(३) मुग्धा—(नायक जिसका वेष विन्यासादि करे)

(४) मध्या—(जिसके साथ नायक कृतज्ञ होता है)

(५) सयुक्तिका—(समीचीन उक्तियुक्ता)

(६) सोल्लासा—(कान्त के व्यवहार से उल्लसित होने वाली)

(७) अनुकूला—(जिसका नायक अनुकूल है)

(८) अभिषिक्ता—(स्नान के बाद नायक जिसकी सेवा चामर-व्यजनादि से करता है)

शृङ्गार के उपरोक्त ६४ प्रकारों और नायक-नायिका के ६४ प्रकारों को लेकर वैष्णव पदावलीकारों ने प्रत्येक प्रकार को सरस पदों में ग्रथित करके अनेक पदावलियाँ रची हैं। मणिपुरी गुरुओं ने इन पद्यों पर तथा तत् सदृश अन्य पद बनाकर, उस पर नृत्यरचना की और संगीत को समृद्ध बनाया।

सखा और सखी

श्री राधा कृष्ण की अपूर्व लीला और कीर्तिसंपादन में जो साहाय्य करते हैं, वे वैष्णव साहित्य में सखा और सखी शब्द से जाने जाते हैं।

वृन्दावन के गोप और गोपी सखा और सखी का पद अलङ्कृत करते हैं। उनमें परस्पर विश्वास-प्रेम था और छल-कपट नहीं था। वय और वेष-भूषादि में जिनका साम्य रहता था, वे सखियाँ थीं।

श्री राधा की सखियों के पाँच प्रकार हैं : सखी, नित्यसखी, प्राणसखी, प्रियसखी, परमश्रेष्ठ सखी। अन्तिम प्रकार में ललिता, विशाखा, चित्रा, चम्पकलता, तुङ्ग विद्या, रङ्ग देवी और सुदेवी, ये अष्ट सखियाँ थीं।

सब सखा नायक के सहायक थे। चेट, विट, विदूषक, पीठमर्दक, प्रिय-नर्मसखा, ये सखाओं के पाँच भेद हैं। ये सब परिहास कथन, हास्य विनोद में निपुण, सर्वदा गाढानुरागी, देशकालाभिज्ञ और रुष्ट गोपीगण की प्रसन्नता में पटु तथा निगूढ मंत्रणा में सहयोग देने में कुशल थे।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मधुमङ्गल, श्रीदाम, सुदाम, सुबलादि श्रीकृष्ण के उन सखाओं में श्रेष्ठ थे[1]। गोष्ठ लीला में कभी-कभी द्वादश गोपाल के नाम से वर्णन आता है। उनके नाम हैं—श्रीदाम, सुदाम, दाम, वसुदाम, सुब्रल, महाबल, सुबाहु, महाबाहु, अर्जुन, लवंग, मधुमंगल, प्रवाल[2]।

१. विशेष विवरण के लिए देखिए राधाकृष्ण गणोद्देश दीपिका।
२. श्री श्रीपदरत्नमाला में इनका विशेष उल्लेख है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१२. उत्सवादि में नृत्यानुष्ठान

(१) **खुबाक ईशै** (करताली नृत्य)—आषाढ़ महीने की शुक्ल द्वितीया के रोज जगन्नाथ की रथयात्रा का दिन मनाया जाता है। इस दिन से खुबाक ईशै (ताली के साथ नृत्य), ताण्डव (नीपा खुबाक ईशै) तथा लास्य (नुपी खुबाक ईशै) किया जाता है जो हरिशयन के दिन (एकादशी को) समाप्त होता है। गीत गोविन्द का दशावतार स्तोत्र हाथ-ताली के साथ-साथ गाते हैं। इस अवसर पर कृष्ण का मथुरागमन होता है। इसलिये व्रज विलाप अथवा माथुर गाकर अभिनय करते हैं। शास्त्र में इसको तालरासक कहा गया है।

(२) **नुपीपाला** (स्त्रियों के वृन्द भिन्न-भिन्न उत्सवों में गाते हैं।) झूलन यात्रा उत्सव के समय मणिपुर में श्रावण मास की पूर्णिमा से लेकर १३ दिन तक राधाकृष्ण की मूर्ति को हिन्दोला पर बैठाकर स्त्रियाँ मंदिला बजाकर राधाकृष्ण-झूलन का वर्णन गाती हैं। मणिपुर में बैठकर मन्दिला बजाते हैं। काछाड़ जिले में नृत्य के साथ भी बजाते हैं।

(३) **होली**—फाल्गुन महीने की शुक्ल एकादशी से यह उत्सव शुरू होता है। वसन्तोत्सव में नाना प्रकार के वर्णन के गीत ढोल, ढोलक, रामताल, डफ, खंजरी इत्यादि के सहयोग से नृत्य के साथ गाये जाते हैं। चतुर्दशी तक एक-एक दल मन्दिर में अनुष्ठान करते हैं। पूर्णिमा के दिन चैतन्य महाप्रभु के जन्मदिन पर सब उपवास करके व्रत करते हैं और रात को मूर्ति की पूजा करके झोंपड़ी को जलाकर अशुभ का नाश करने की कामना करते हैं। उसके दूसरे दिन सुबह से, मन्दिर में निर्दिष्ट समय पर, अनेक दल आकर नृत्य संगीत करते हैं। प्रेक्षकगण तथा कलाकार एक दूसरे को अबीर गुलाल से रंजित करते हैं। फिर पंचमी के दिन गोविन्दजी के मन्दिर से विजय गोविन्दजी के मन्दिर में जाकर इसी अनुष्ठान की पुनरावृत्ति करते हैं और उत्सव समाप्त होता है। मणिपुर में इसको हलंकार कहते हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(४) **थाबन चोंग्बा**—थाबन अर्थात् चन्द्र, चोंग्बा याने कूदना। दोल पूर्णिमा (फाल्गुन पूर्णिमा) से होली के हलंकार पर्यंत पाँच दिन तक युवक-युवतियाँ परस्पर हाथ पकड़ कर बड़े मैदान में रात को आनन्दमय नृत्य का अनुष्ठान करते हैं, उसको थाबन चोंग्बा कहते हैं।

(५) **थांग्-ता**—दुर्गापूजा के उत्सव में दशहरा के दिन क्वाक् जात्रा उत्सव में जब राजा हाथी पर सवार होकर निकलते हैं तब सामने थांग् (तलवार) तथा ता (भाला) सहित विशेष प्रकार के युद्ध के विधान नृत्तरूप में दिखाते हैं। शास्त्र में यह प्रसरण ताण्डव के अन्तर्गत है।

(६) **ध्रुमेल**—नटपाला के ही अन्तर्गत है। किसी बड़े गुरु अथवा राजा की मृत्यु के समय, श्राद्ध अनुष्ठान में ध्रुमेल बजाते हैं। दूर्गा पूजा में भी इसका विधान होता है। इसके चार प्रकार हैं। (१) महाध्रुमेल, (२) गौर ध्रुमेल, (३) नित्याई ध्रुमेल, (४) लाईरेम्बा ध्रुमेल। पहले तीन प्रकारों में १४ मृदङ्ग-वादक होते हैं। यह केवल श्राद्ध विधि में ही किया जाता है। चौथे प्रकार में मृदङ्ग वादकों की नियत संख्या नहीं रहती, फिर भी समसंख्या रहनी चाहिये, ऐसा नियम है। यह दुर्गापूजा में अनुष्ठित होता है।

इसके अलावा रास, नटपाला, लाई हराओबा, बाशक इत्यादि नृत्य अनुष्ठानों का वर्णन इसके पूर्व आया है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१३. जगोई

जगोई शब्द का अर्थ शास्त्रानुसारी नटन अथवा नर्तन है। किसी-किसी पण्डित ने जगोई को चुकोई अथवा चत्कोई, ऐसे अपभ्रंश रूप में वर्णन किया है।

(१) **पुङ्लोल जगोई**—याने नृत्त (मृदंग के बोल पर नर्तन) जो अभिनयविहीन अथवा सौन्दर्यमय अंग संचालन होता है। दशरूपककार के मत में "नृत्तं ताललयाश्रयम्" ताल और लय के ऊपर आधारित अंगसंचालन नृत्त है।

(२) **मोत्तौबा**—अथवा नोईबा—याने नृत्य। अभिनय प्रधान नर्तन को मणिपुर में मोत्तौबा अथवा नोईबा कहते हैं। इसमें गीत के साथ, अथवा गीत के बिना, अंगविक्षेप द्वारा अंतः करण के भाव प्रकाशित किये जाते हैं।

(३) **लीला**—अर्थात् नाट्य—आंगिक, वाचिक, आहार्य, सात्विक, इन चारों अभिनयों के साहाय्य से कोई कथा उपस्थित करना लीला है। गौडीय वैष्णव लोग रासलीला को भी भगवान् की अर्चना का एक प्रकार मानते हैं।

(इस लीला को जगोई के अन्तर्गत क्यों रखा है ?)

जगोई शब्द से प्रायः नृत्त-नृत्य का ही बोध होता है लेकिन मणिपुर में जब कोई रास लीला देखकर आये और उससे कोई पूछे कहाँ गये थे, तो वह उत्तर देगा 'जगोई रास' देखने गये थे। इससे सिद्ध है कि रास या नाट्य जगोई के अन्तर्गत ही है।

निपा और नुपी जगोई

मणिपुरी नर्तन के दो विभाग हैं, निपा और नुपी। निपा का अर्थ है पुरुष। पुरुष का नर्तन ताण्डव कहलाता है। नुपी का अर्थ है स्त्री। स्त्री का नर्तन लास्य कहलाता है। "पुं नृत्यं ताण्डवं प्राहुः स्त्री नृत्यं लास्यमुच्यते"—

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

नारदपञ्चसारसंहिता। मणिपुरी नर्तन की विशेषता के अनुसार ताण्डव और लास्य दोनों में मृदु, मन्द दोलनशीलता है। तरंगों की तरह, एक के बाद दूसरी गति परस्पर समन्वित ही रहती है। पुरुषों के नर्तन में कभी उद्धत भाव प्रकाशित होते हैं। फिर भी एक विशिष्ट मर्यादा का उल्लङ्घन नहीं होता। स्त्रियों के पुंग्लोल जगोई में द्रुतगति होने पर भी उसमें कोमलता समन्वित रहती है। इन दोनों ताण्डव लास्य में समानता होने पर भी उत्प्लुति (कूदना), उपविष्ट (बैठना), स्थानक (विशिष्ट स्थिति) इत्यादि के द्वारा ही ताण्डव का लास्य से भेद किया जाता है। दोनों में पैरों का परस्पर अन्तर नहीं रहना चाहिये (जानु पास रहने चाहिये)। इसमें फैनम्बा अर्थात् जानु का नमन हर समय नहीं करना चाहिये। किंतु विशिष्ट स्थान पर ही उसका उपयोग होना चाहिये। यही प्राचीन धारा चलती आई है।

अभिनय से अन्यत्र हाथ मस्तक के ऊपर नहीं जाता या कमर के नीचे नहीं जाता। बाहुओं का चलन दण्डाकार न होकर, कूर्पर अल्पवक्र करके, ज्यादातर गोलाकारानुगामी रहता है। शरीर के पूर्वार्ध में मस्तक और नीचे का भाग जब दोलित होता है, तब स्वाभाविक रीति से परस्पर विरुद्ध दिशा में रहता है।

साधारणतः मणिपुरी नर्तन कोमलता प्रधान है, ऐसा मानकर बहुत से लोग अतिशय कोमलता प्रदर्शित करके तरङ्गों का सादृश्य रखने में एक अङ्ग संचालन में दूसरा मिला देने से अङ्ग संचालन की विशेषता नष्ट कर देते हैं, किन्तु यह उचित नहीं है। प्रत्येक चलन अनुस्यूत होते हुए भी अलग-अलग प्रतीत होना चाहिये। जैसे उपलई में दायें हाथ से घूमकर उसको वक्षःस्थल पर रखना चाहिये। मणिपुरी नर्तन में प्रत्येक अङ्ग का समप्राधान्य रहता है।

निपा जगोई मणिपुर में तीन प्रकार से विद्यमान है।

(१) चोलोम—करताल चलन और मृदङ्ग चलन।
(२) शन्शेन्बा जगोई—(गोष्ठ लीला का नृत्य)
(३) थांग्-ता जगोई—(तलवार-भाला नृत्य)

(१) **चोलोम**—इस नर्तन प्रकार का फिरेप में (स्थानक में) जानु और पैरों में नियमित अन्तर रहता है। यह नर्तन प्रकार पदसंचालन विशेष प्रकार की स्थिति में रखकर किया जाता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्रथम स्थिति

दो पैरों के बीच आगे से एक वित्तस्ति (वित्ता) अन्तर और एड़ियों के बीच तीन अंगुल अन्तर रखकर खड़े रहना।

(क) **थौंगखौंग** (विशेष स्थानक) तीन प्रकार का है। बायाँ पैर अल्प तिर्यक्, दाहिना पैर अल्प दूर रख तिर्यक् करके जानु थोड़ा नमित करना।

(ख) दूसरे में जानुओं से नीचे तक पैरों में थोड़ा अधिक अन्तर रखना और दोनों मणिवन्ध जानु प्रदेश तक लाना, इस प्रकार नत होकर खड़े रहना।

(ग) पैरों में अधिक अन्तर रखकर कूर्पर जब तक जानुदेश स्पर्श करें तब तक नत होना।

इसमें अङ्ग संचालन के प्रकार अनेक हैं। यह नर्तन प्रकार मुख्यतः करताल तथा पुंग (मृदङ्ग को) लेकर किया जाता है तथा पुरुषों के खुबाक ईशै (करताली, ढोलक इत्यादि) में भी किया जाता है। चोलम् नृत्य नटपाला के अन्तर्गत है। यह नर्तन श्राद्ध, जात कर्म, उपनयन, विवाहादि संस्कारों में किया जाता है।

(२) **शन्शेन्बा जगोई**—(गोष्ठ लीला नृत्य) इस ताण्डव प्रकार का लास्य के साथ साम्य होते हुए भी उत्प्लुति और उपविष्ट, इन दो क्रियाओं के कारण भेद किया जाता है। शास्त्र में इसको गुण्ठन कहा है। गोष्ठ लीला और उलूखल रास में, कृष्ण तथा गोपबाल, गोष्ठ भङ्गी, गोष्ठ वृन्दावन भङ्गी (परम्परागत नृत्त) तथा पुंग्लोल जगोई में इसका प्रयोग करते हैं।

(३) **थांग्-ता जगोई**—(तलवार तथा भाला नृत्य) यह प्रकार उपरोक्त दोनों प्रकारों से भिन्न है। इसमें प्रत्येक अंग विमुक्त भाव से क्रिया करते हैं। तलवार तथा भाला लेकर यह नर्तन होता है। युद्ध में जैसा अंग संचालन होता है, उसका अनुकरण इसमें रहता है। शास्त्र में इसको प्रसरण कहा है। मणिपुर में क्वाक् जात्रा उत्सव में ये नर्तन किये जाते है।

नुपी (स्त्री-लास्य)

नुपी जगोई अथवा लास्य के दो प्रकार हैं।

(१) भंगी जगोई, (२) पुंग्लोल जगोई।

भङ्गी जगोई में भङ्गी परेंग का नृत्त किया जाता है। पुंग्लोल-शब्द का अर्थ वोल है। पुंग्लोल जगोई याने वोल पर नृत्त। भङ्गी परेंग और

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

पुंग्लोल जगोई इन दोनों में बोल पर नृत्त होते हुए भी भङ्गीपरेंग नृत्त की रूढ़ि से पृथक् गणना की गई है और इतर नृत्त कृतियाँ, जो बोल पर होती हैं, उन सबका पुंग्लोल जगोई शब्द से व्यवहार परम्परा से ही चलता है।

(१) **भङ्गी जगोई**—इस नृत्त की गति मन्द होती है। गाम्भीर्य, मन्दता और मर्यादा ही इसका सौन्दर्य है।

इस नृत्त में स्वेच्छा से परिवर्तन के लिये कोई अवकाश नहीं है। इसका वैशिष्टच पारस्परिक स्वरूप के रक्षण में ही है। मणिपुरी नर्तन की जो विशेषताएँ हैं, वे सव इस नृत्त में समाविष्ट हैं। इस लिये नर्तन के अभ्यासकों को इस नृत्त पर प्रभुत्व प्राप्त करना आवश्यक है। इस नृत्त प्रकार को शास्त्र में 'सीमिताङ्गम्' कहा है। यह प्रकार स्त्रियों की चारों रासलीला में करना आवश्यक है।

(२) **पुंग्लोल जगोई**—यह नृत्त द्रुत, मध्य, विलम्बित तीनों लयों में होता है। यह नृत्त बोलों के अनुसार होता है। इसको शास्त्र में नृत्तवन्ध कहा है। बोल जिस लय में, जिस छन्द में होता है, तदनुसार ही नृत्त होता है। इसमें भङ्गी की तरह नियत रचना होनी चाहिये, ऐसा नियम नहीं है। इसमें नृत्त रचना स्वाधीन होती है। इस नृत्त में विविध ताल, छन्द इत्यादि के नाना संमीलन से कठिन से कठिन भी रचना होती है। प्राचीन गुरुओं की परम्परागत रचना का रुचि के अनुसार सौन्दर्य वृद्धि के लिये कोई-कोई अदल-वदल करते हैं। लेकिन ऐसा करना अनुचित है। क्योंकि ऐसा करने से प्राचीन गुरुओं की नृत्त रचनाएँ, बाद के शिक्षार्थियों को अज्ञात रहेंगी। इसलिये प्राचीन रचनाओं को अविकृत रखना ही उचित है। गुरुलोग नये बोलों पर नई रचनाएँ करते ही जाते हैं। इसलिये प्राचीन गुरुओं की रचनाओं को अविकृत रखना आवश्यक है।

साधारणतः एक बोल पर एक ही रचना गुरुओं ने की है। फिर भी कभी-कभी एक बोल पर भिन्न गुरुओं की भिन्न-भिन्न नृत्त रचनाएँ देखने को मिलती हैं। प्रायः एक गुरु की बोल रचना पर दूसरे गुरु की नृत्त रचना मिलती है। प्राचीन गुरुओं की अगणित बोल रचनाएँ प्रसिद्ध हैं। अगर इनसे भी संतोष न हो तो नई बोल रचना करके तदनुसार नृत्त रचना करने की भी स्वतन्त्रता है। शास्त्र में पुंग्लोल जगोई को 'स्फुरिताङ्गम्' कहा है। यह नृत्त प्रकार स्त्रियों की सब रासलीलाओं में होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१४. चाली

चाली नृत्त मणिपुरी नर्तन की महत्वपूर्ण विशिष्ट नृत्त रचना है। यह प्राथमिक और अवश्यानुष्ठेय है। शिक्षा क्रम में यह अपरिहार्य है। सामान्यतः चार बोलों पर की गई नृत्त रचना मूल चाली मानी जाती है। विशेषतः चाली अरैबी (चालिक। भ्रमरी) तक के पाँच बोलों पर की हुई नृत्त रचना ही चाली मानी जाती है। यहाँ सिर्फ लास्य में ही मतभेद अनुभूत होता है।

चाली के लास्य और ताण्डव दो भेद हैं। मूल ताण्डव चाली सिर्फ तीन बोलों का नृत्त है।

लास्य का तीसरा बोल, ताण्डव चाली में नहीं होता है। इतर तीन १, २, ४, बोल इसमें प्रयुक्त होते हैं।

चाली शब्द का प्रयोग तीन अर्थों में होता है। (१) चाली एक नृत्त है। (२) चाली नामका एक ताल भी है।

प्राचीन गुरुओं के हस्तलिखित ग्रन्थों में चार मात्राएँ और एक ताली, ऐसा चाली ताल का वर्णन है।

जैसे—१ (+), २, ३ (०), ४ वर्तमान में इसी ताल में तीन ताल मेल की तरह आठ मात्राएँ और तीन तालियाँ दी जाती हैं। १ (+) २ ३ (०) ४। ५ (२) ६। ७ (३) ८।

इस ताल पर अनेक अलङ्कार अथवा परेंग होते हैं। इन अलङ्कारों अथवा परेंग पर जब नृत्त होता है, तब वह चाली नृत्त के अन्तर्गत नहीं होता है। उसे चाली परेंग कहते हैं। चाली परेंग ताण्डव और लास्य दोनों में होता है।

ऐसे तो अनेक शिक्षक, छात्रों को अपने ज्ञान के अनुसार चाली परेंगों की क्रम से शिक्षा देते हैं। यह क्रम प्रत्येक गुरु की इच्छानुसार प्रयुक्त होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

विभिन्न गुरुओं के रचना-समूहों को समन्वित करने पर चाली परेंग बहुत बड़ा हो सकता है। यह बात छात्रों के मन में होनी चाहिये।

चाली अरैबी तक सब गुरुओं का क्रम एक ही है। किन्तु परेंग के समूह में भेद देखा जाता है।

परेंग याने प्राचीन गुरुओं की एक या एकाधिक अलंकारों पर नृत्त रचना। शिक्षा देते समय प्रत्येक गुरुओं के परेंगों को उन्हीं के नाम और क्रम से सिखाना उचित है। ऐसा न हो तो कौन-सी रचना किस गुरु की है, यह मालूम नहीं होगा।

(३) चाली एक बोलों का प्रबन्ध भी है। मणिपुर में जो नृत्तगीत प्रधान संकीर्तन होता है, उसके प्रारम्भ में नियम बद्ध बोल बजाये जाते हैं। उसे मणिपुरी लोग राग अथवा अहौबी कहते हैं।

बोल की एक विशिष्ट प्रकार की छन्दोमय रचना होती है, यह बोलों का प्रबन्ध है।

इस प्रकार के राग (अहौबी) अनेक हैं। चाली प्रबन्ध उनमें से एक है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१८. भंगी परेंग

भञ्ज् धातु से घञ् प्रत्यय और कुत्व होकर भङ्ग शब्द विशिष्ट रचना हावभाव का वाचक हुआ। उससे इन् प्रत्यय करके भङ्गी बना है। भञ्ज का अर्थ तोड़ना है, धातु अनेकार्थक होने से प्रकृत में विवक्षित अर्थ अङ्गविन्यास और अङ्ग का चालन ऐसा रूढि से लिया जाता है। परेंग शब्द का अर्थ है आवली क्रमविन्यास, (क्रम से अंगों का संचालन)। नृत्य में शरीरावयवों को नाना प्रकार से मोड़कर भिन्न-भिन्न अंगविन्यास करते हैं। वे ही अंग विन्यास जब क्रम से उपस्थित किये जाते हैं, तब उसे भङ्गी परेंग कहा जाता है। भङ्गी परेंग मणिपुरी नृत्य की आत्मा जैसा ही है। क्योंकि भंगी विशेषता में मणिपुरी नृत्य का वैशिष्ट्य पूर्ण क्रम से प्रकाशित होता है।

मणिपुरी नृत्य में भङ्गी परेंग पाँच हैं। (१) अचौबा भङ्गीपरेंग, (२) वृन्दावन भंगी परेंग, (३) खुरुम्बा भंगी परेंग, (४) गोष्ठ भंगी परेंग, (५) गोष्ठ वृन्दावन भंगी परेंग। पहले तीन स्त्रीकर्तृक अतएव लास्य हैं और अन्तिम दो पुरुष कर्तृक अतएव ताण्डव हैं।

कुछ गुरुओं के मत से अचौबा में श्रीकृष्ण के रूप-वर्णन का भाव है। और कुछ दूसरे लोगों के मत से उसमें संभोग का भाव है। वृन्दावन परेंग में गीत द्वारा वृन्दावन का वर्णन गाते है। खुरुम्बा युगल प्रार्थना है। ये तीनों लास्य शैली में किये जाते हैं। गोष्ठ भङ्गी परेंग में गोष्ठ लीलाओं के अनुकरण का और वर्णन का भाव होता है। गोष्ठ वृन्दावन भङ्गी परेंग में गोष्ठ वृन्दावन के वर्णन का भाव होता है। ये ताण्डव में किये जाते हैं। ये सब भङ्गियाँ ताल प्रबन्ध के अन्तर्गत हैं।

(१) **अचौबा भङ्गी परेंग**—भूषणातालप्रबन्ध के अन्तर्गत है। इसका ताल (क) राजमेल ७ मात्रा, मतान्तर से १४ मात्राओं से होता है। (ख) तान्चेप ४ मात्राएँ। (ग) मेन्कूप ६ या ३ मात्राएँ और चाली ८ मात्राएँ से समाप्त करते हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(२) **वृन्दावन भंगी परेंग**—(क) तीन ताल अचौवा = ८ मात्राएँ, (ख) तान्चेप = ४ मात्राएँ, (ग) मेन्कूप = ३ किंवा ६ मात्राएँ, (घ) और चाली ८ मात्राएँ—ये ताल हैं।

(३) **खुरुम्बा भंगी परेंग**—(क) राजमेल, (ख) मेन्कूप, (ग) तान्चेप और चाली ये ताल होते हैं।

(४) **गोष्ठभंगी परेंग**—(क) राजमेल, (ख) मेन्कूप, (ग) तान्-चेप ये ताल होते हैं। इसके अन्त में चाली नहीं होता। क्योंकि इसके साथ ही गोष्ठ वृन्दावन भंगी परेंग किया जाता है।

(५) **गोष्ठवृन्दावन**—(क) तीनताल अचौबा, (ख) मेन्कूप, (ग) तान्चेप और चाली से समाप्त होता है।

ऊपर जो तालों का क्रम दिया है, उसमें राजमेल और तीन ताल अचौवा छोड़कर, तान्चेप, मेन्कूप क्रम से प्रयुक्त होने पर, फिर से उनकी आवृत्ति की जाती है। यह प्रत्येक भंगी करीव-करीव आधे घण्टे में होती है।

महाराजा भाग्यचन्द्र के समय में ई० स० १७७९ में अचौवा भंगी परेंग की रचना गुरु ङन्बम् स्वरूपानन्द, तखेन्चङ्बम् रसानन्द और किसी के मत से कावोखुम्बोंवा ने भी उसमें साहाय्य किया है। १८२६ में महाराजा गम्भीर सिंह के समय में गोष्ठ भंगीपरेंग गुरु समयरांग ने प्रवृत्त किया।

ई० स० १८८५ में चन्द्रकीर्ति महाराजा के समय में [1]वृन्दावन भङ्गीपरेंग, खुरुम्वाभङ्गी परेंग और गोष्ठ वृन्दावन भंगीपरेंग की रचना गुरु सनाचन्द्र-हास, थोकचोम् मरैवा, तखेन् चङ्गवम्-वामन अयगाथौरानीसावी ने की। इन सब भङ्गियों की रचना प्राचीन काल में हुई है। किन्तु वर्तमान में किसी-किसी स्थल पर गुरुओं में अंग संचालन तथा बोलों में थोड़ा मतभेद देखा जाता है। उस पर गवेषणा चलती है।

१. श्री सुराचांद शर्मा कृत मैतै जगोई, भाग १, पृष्ठ ४६।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१६. ताल

"तल्यते प्रतिपाद्यते नृत्यं गीतं वाद्यं चानेन इति तालः।" नृत्य, गीत, और वाद्य का जो आधारभूत (युम्फम्) है वह ताल है। "तालःकाल-क्रियामानम्," इत्यमरः। काल की मात्राएँ और क्रिया नापने का साधन ताल है।

ताल मात्राओं से नापा जाता है।

वर्तमान संगीत में घड़ी के लोलक की एक गति, या सशक्त पुरुष की नाड़ी का प्रत्येक स्पन्दन (मिहुनचोङ्ग्वा), या एक लघु अक्षर के उच्चारण-काल को ही मात्राकाल कहा जाता है। लेकिन प्राचीन संगीत शास्त्र में चार, पाँच, या छः लघ्वक्षर के उच्चारण काल को ही एक मात्रा या एक लघु, ऐसा उल्लेख मिलता है। मणिपुर में कभी-कभी एक लघ्वक्षर मात्रा काल में १ से ५ तक लघु अक्षर भी व्यवहृत होते हैं।

मात्राओं की विशिष्ट संख्या से भिन्न-भिन्न ताल होते हैं। मणिपुर में चार-पाँच मात्राओं से लेकर अड़सठ मात्रा तक के भिन्न-भिन्न ताल होते हैं। जैसे चार मात्राओं का ताल तान्चप, तीन अथवा छः मात्राओं का मेन्कूप, सात मात्राओं का तीन ताल मचा, इत्यादि।

ताल के घटक अवयवों को अङ्ग (सरुक्) कहते हैं। जैसे अनुद्रुत, द्रुत, द्रुतविराम, लघु, लघुविराम, गुरु, प्लुत्, काकपद।

लघु की मात्रा बदलने से आठ जातियाँ होती हैं।

जैसे एकाकी (लघु की एक मात्रा), पक्षिणी (लघु की दो मात्राएँ), त्र्यश्र (लघु की तीन मात्राएँ), चतुरश्र (लघु की चार मात्राएँ), खण्ड (लघु की पाँच मात्राएँ), ऋतु (लघु की छः मात्राएँ), मिश्र (लघु की सात मात्राएँ), संकीर्ण (लघु की नौ मात्राएँ)। मणिपुर में इन सबका व्यवहार विभिन्न तालों के प्रवन्ध तथा विभिन्न छन्दोमय बोलप्रवन्ध (राग और अहौबी) में होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ताल नापने के लिये तान्था अर्थात् ताली (सशब्द क्रिया) और हाइदोक्पा अर्थात् खाली (निःशब्द क्रिया)—ये क्रियायें होती हैं। इनके द्वारा ताल के घटक अवयवों का ज्ञान होता है। मणिपुर में ये क्रियाएँ अपनी परम्परा से चलती हैं। ताल में विभाग की सूचना तान्था या ताली से होती है, हाइदोक्पा या खाली से नहीं, जैसे ताल जलधिमान में।

×				२				३				०			
१	२	३	४।	५	६	७	८।	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६

मणिपुर में ताल देने की क्रिया इस प्रकार है।

अङ्ग	मात्रा	चिह्न	क्रिया
अनुद्रुत	१	◡	ताली
द्रुत	२	०	पहली मात्रा में ताली।
द्रुतविराम	३	०́	पहली मात्रा में ताली, दूसरी में मुष्टि, तीसरी में छोड़ना।
लघु	४	।	पहली में ताली, तीसरी में खाली।
लघुविराम	५	।́	पहली में ताली, दूसरी में मुष्टि, चौथी में छोड़ना।
गुरु	८	ऽ	पहली में ताली, तीसरी में दाहिनी तरफ, पाँचवीं में अपनी तरफ, सातवीं में सामने हस्त विमोक।
प्लुत	१२	ऽ̇	पहली में ताली, पाँचवीं में दाहिनी तरफ, नवीं में अपनी तरफ, ग्यारहवीं में सामने की तरफ, हस्तक्रिया
काकपद	१६	×	व्यवहार में नहीं आता।

परिग—मूल ताल के ऊपर रचे हुए बोल को परिग कहते हैं। उत्तर भारत में उसको ठेका कहते हैं। मणिपुर में एक कोयचा में (आवर्तन में) एक परिग होता है। किन्तु गायन के समय गीत के हिसाब से दो या तीन आवर्तन में भी एक परिग होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

किसी भी ताल की मूल मात्राओं को द्विगुणित, त्रिगुणित इत्यादि गुणाकार से नाना आकारों में आवर्तित करके जो बोल-रचना होती है, उसे मणिपुर में अलङ्कार पुङ्गलोल कहते हैं। उत्तर भारत में तोड़ा अथवा परन कहते हैं। इसमें मूल ताल का विभाग ताली और खाली से अखंड रहता है। एक ताल पर एक गुरु की एक ही अलङ्कार की रचना हो तो उसे अलङ्कार या नाइतोम कहते हैं। एक से ज्यादा अलङ्कारों की रचना होने पर उसे परेंग कहते हैं।

परेंग जिस ताल से घटित होता है उस परेंग का उल्लेख ताल के नाम से होता है। जैसे तान्चप् परेंग (कहरवा), मेनकूप् (दादरा या खेमटा)।

प्राचीन समय से गुरुओं ने वैष्णवशास्त्रों से प्रेरणा लेकर अपनी सर्जनशील प्रतिभा द्वारा विशिष्ट ताल-प्रक्रिया विकसित कर ताल और छन्दोलय का भंडार वढ़ाया है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१७. मणिपुर में प्रचलित कुछ ताल

१. **तान्चप् (एकताल)** ४ मात्रा ।
२. **मेनकूप् (त्यश्रजाति एकताल)** ३ मात्रा ।
मेनकूप् (ऋतुजाति एकताल) ६ मात्रा ।
३. **एकताल अराउबा (द्विकल एकताल)** ८ मात्रा ।
४. **रूपक** २ । ४ = ६ मात्रा ।

रूपक, रूपक परिमाण और तेखाऊ रूपक इन तीनों के विभाग समान हैं लेकिन उनके चलने के ढंग से वे अलग पहचाने जाते हैं ।

५. **तीन ताल मचा** २।२।३ = ७ मात्रा ।
६. **दुतीला तीनताल** ३।२।२ = ७ मात्रा ।
७. **तेवड़ा** ३।२।२ = ७ मात्रा ।
८. **तीनताल दशकोश** ३।२।२ = ७ मात्रा ।

इन तीनों (६, ७, ८) का विभाग एक होते हुए भी चलने के ढंग से वे अलग पहचाने जाते हैं ।

९. **दशकोश** २।१।२।१।१ = ७ मात्रा ।
१०. **राजमेल** ४।३ = ७ मात्रा ।
अथवा ४।३।४।३ = १४ मात्रा ।

भूषणा, मेनगोई, मेलमातेक और मेलतान्चप्—ये राजमेल छन्द के अन्तर्गत हैं ।

११. **यात्रा रूपक** २।५ = ७ मात्रा ।
यह ताल प्रायः द्विकल में ४।१० = १४ मात्रा में प्रयुक्त होता है ।

१२. **चाली** प्राचीन हस्तलिखित मृदंगसंग्रह आदि ग्रन्थों के अनुसार चाली ४ मात्रा का है ।

वर्तमान में तीन ताल मेल की तरह ४।२।२ = ८ मात्रा के विभाजन से प्रचलित है ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१३. **तीन ताल अचौबा** २।२।४ = ८ मात्रा ।

१४. **भंगदश (ऋतुजाति)** २।६ = ८ मात्रा ।

१५. **गजन (गजेन्द्र)** ३।५ = ८ मात्रा ।

१६. **मदन** २।३।४ = ९ मात्रा ।

१७. **मैतै सूरफाक् (रूपक काटा)** २।४।४ = १० मात्रा ।

१८. **मयांग् सूरपाक्** ४।२।४ = १० मात्रा ।

१९. **झाँपताल** २।५।३ = १० मात्रा ।

२।३।२।३ = १० मात्रा ।

(रास में बजाया जाता है ।)

३।४।३।४ = १४ मात्रा ।

(नटपाला में बजाया जाता है)

२०. **कंकन** १।३।२।५ = ११ मात्रा ।

२१. **तान्जाउ (चौताल)** ४।४।२।२ = १२ मात्रा ।

२२. **कट्टवाली (संकीर्णजाति)** ३।९ = १२ मात्रा ।

२३. **दुयतालमचा (संकीर्ण जाति)** ३।९ = १२ मात्रा ।

२४. **विद्याधर** ३।४।२।४ = १३ मात्रा । अन्य मत से १४ मात्रा और ६ भाग हैं ।

२५. **त्रिपुट सवारी** ३।३।८ = १४ मात्रा ।

२६. **चार ताल** २।४।४।४ = १४ मात्रा ।

जयन्ता चारताल, बड़घूङ्गाई, चारताल मेल, तीन ताल चार ताल, जयदिक (यति) । इन सब तालों के विभाग एक होते हुए भी इनके चलने के ढङ्ग से अलग पहचाने जाते हैं ।

२७. **चारताल अचौबा** ४।४।२।४ = १४ मात्रा

२८. **मातङ्गी** ३।४।४।४ = १४ मात्रा ।

२९. **तीनताल पंचम** ४।४।२।२।४ = १६ मात्रा

३०. **मकरन्द** २।२।४।४।४ = १६ मात्रा ।

३१. **वीरपञ्च** ४।२।२।४।२।२ = १६ मात्रा ।

३२. **जलधिमान** ४।४।८ = १६ मात्रा ।

३३. **खूजी ताल** २।३।२।३।२।२।४ = १६ मात्रा ।

३४. **पञ्चम** ४।४।४।२।४ = १८ मात्रा ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

३५. **लक्ष्मी ताल** ४।४।२।३।१।२।२ = १८ मात्रा
मृदंग व्यवस्था संगीत के अनुसार।
२।२।४।२।२।४।१।२।२।२।२।२।१।२।३ = ३५ मात्रा।

३६. **दानि (ऋतुजाति)** ६।३।३।६ = १८ मात्रा।

३७. **सप्तताल** २।४।२।४।२।२।४ = २० मात्रा।

३८. **सप्तमात्रा** ब्रह्मताल = श्रीकृष्णरस संगीत संग्रह के मत के अनुसार ब्रह्मताल के अन्तर्गत सप्तमात्रा नाम का ब्रह्मताल है। प्रायः उसको ब्रह्मज और विहरहिरेके नाम से जानते हैं। २।४।२।४।४।४।४ = २४ मात्रा।

३९. **गजेन्द्रगुरु** २।४।२।४।१२ = २४ मात्रा।

४०. **वीरदशक** ४।२।२।४।२।४।२।४ = २४ मात्रा।

४१. **वीरविक्रम** मृदंगव्यवस्था संगीत के अनुसार
४।२।२।४।२।१० = २४ मात्रा।

अथवा ८।२।२।८।२।६ = २८ मात्रा।

४२. **ऽयश्रवण** (वीरविक्रम के अन्तर्गत)
४।२।२।४।४।८ = २४ मात्रा।

४३. **रुद्रताल** ४।२।४।२।२।२।२।२।२।२।४ = २८ मात्रा। मृदंगव्यवस्था संगीत के अनुसार = ४।२।४।२।२।४।४।२।२।२।४ = ३२ मात्रा।

४४. **ब्रह्मताल** ४।२।४।२।२।४।२।२।२।४ = २८ मात्रा।

४५. **पञ्चमस्वारी** ३।३।८।८।८ = ३० मात्रा।

४६. **ब्रह्मयोग** ४।२।४।२।२।४।२।२।२।४।२।४ = ३४ मात्रा
(मृदंग व्यवस्था संगीतानुसार)

४७. **कोकिलप्रिय ताल** ४।८।८।४।४।८ = ३६ मात्रा।

४८. **विष्णुताल** ४।४।४।२।४।४।२।२।२।२।२।४ = ३६ मात्रा।
दूसरा मत ८।८।८।४।८ = ३६ मात्रा।

४९. **रूपककाटा** २।४।४।२।४।४।२।४।२।४।४ = ३६ मात्रा।

५०. **रंगाभरण** ८।८।४।४।१२ = ३६ मात्रा।

५१. **जयदिक काटा (यतिकाटा)** २।४।४।२।४।४।२।४।४।४।२।४।४
= ४४ मात्रा।

दूसरा मत २।४।४।२।४।४।२।४।४।४ = ३४ मात्रा।
(मृदंग व्यवस्था सङ्गीतानुसार)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

५२. **आगेरम्भा** २।४।४।२।४।४।२।४।२।४।२४ = ४६ मात्रा ।

५३. **शंखचक** (फेराताल) २।४।२।४।४।४।२।४।४।४।२।४।४।४ = ५२ मात्रा ।

५४. **शूल ताल** ४।२।४।२।४।२।४।४।४।४।२।४।४।४।२।४ = ५४ मात्रा

५५. **झूलके झूलके प्यारी (फेराताल)**
२।१।२।१।१।२।१।२।१।१।२।४।४।४।२।४।४।४।२।४।२।४ = ५४ मात्रा ।

५६. **मणिपुर ताल** ८।४।१२।८।८।१२।४।४ = ६० मात्रा ।

५७. **इहकलिज़ुगे (फेराताल)**
४।४।२।४।४।४।२।४।४।४।२।४।२।४।२।४।४।४।२।४ = ६८ मात्रा ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१८. गीत

मणिपुर की गाने की अपनी खास परम्परा है। वसन्त, तोडी, बिलावल, इत्यादि नाना राग गाते हैं। यह पद्धति उत्तर और दक्षिण भारत की पद्धति से अलग है। इस विषय पर अभी बहुत गवेषणा चलती है। गाने के पहले राग का आलाप होता है। इसमें धर (स्थायी), पञ्चम (अन्तरा) और दीर्घ (आभोग) यह क्रम होता है। राग के आलाप के बाद राग की मूर्ति का ध्यान गाया जाता है। फिर इसी राग में तालबद्ध गीत गाते हैं। ये गीत बंगाल के भक्तकवि जयदेव, नरोत्तमदास, गोविन्ददास इत्यादि कवियों की रचना से लिये जाते हैं। संस्कृत, मैथिली, प्राचीन बंगला, ब्रजबुलि (बंगला, मैथिली, ब्रजभाषा, उडिया इत्यादि भाषाओं का मिश्रण) इत्यादि भाषाओं में ये गीत होते हैं। वर्तमान में गुरुजन मैतेई भाषा में अनेक गीतों की रचना करते हैं। इन गीतों का विषय राधाकृष्ण-लीला होता है।

शास्त्रानुसार संगीत के दो भेद हैं, अनिबद्ध और निबद्ध। ताल रहित संगीत को अनिबद्ध और ताल सहित संगीत को निबद्ध कहते हैं। निबद्ध संगीत को प्रबन्ध कहते हैं। मणिपुर में तालप्रबन्ध नाम की विशेष रचनाएँ अधिकतर मिलती हैं। तालप्रबन्ध में एक से अधिक तालों की रचनाएँ रहती हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१९. प्रबन्ध

संगीतशास्त्र में छः अंग और चार धातुओं से युक्त रचना को प्रबन्ध कहते हैं।

पद, स्वर, विरुद, तेनक, पाट, ताल, ये छः अंग हैं।

(१) **पद**—जिसमें वर्णनीय विषय रहता है, वह पद नामक अंग है।

(२) **स्वर**—सा, री, ग इत्यादि सात स्वर हैं।

(३) **बिरुद**—जिसमें कवि नामादि और गुणों का वर्णन होता है, वह विरुद नामक अंग है।

(४) **तेनक**—जिसमें तेन शब्द रहता है वह तेनक है। तेन शब्द मंगलवाचक है।

(५) **पाट**—मृदंगादि के बोल पाट नामक अंग हैं।

(६) **ताल**—पद्य में काल और क्रिया का नियन्त्रण करनेवाला, विशिष्ट मात्राओं का विशिष्ट समूह ताल है।

ताल सबका अपरिहार्य अंग है। इसमें दूसरे अंगों में से एक या अनेक मिलाने से प्रबन्ध होता है। इसमें जब नृत्त, अथवा नृत्य होता है, तो उसे प्रबन्धनृत्त अथवा प्रबन्धनृत्य कहते हैं। मणिपुर में प्रबन्धों पर अनेक नृत्त-नृत्यों की रचनाएँ हैं।

अङ्गों के न्यूनाधिक भाव से प्रबन्ध की पाँच जातियाँ होती हैं—मेदिनी, नन्दिनी, दीपनी, पावनी और तारावली।

यहाँ रास में प्रचलित कुछ उदाहरण देते हैं।

छः अंगों से युक्त प्रबन्ध को मेदिनी कहते हैं। उदाहरण—'जयजगद् वन्दिनी' इत्यादि।

पाँच अंगों से युक्त प्रबन्ध को नन्दिनी कहते हैं। उदाहरण—'झन्ता झन् झन् ता·········'।

चार अंगों के प्रबन्ध को दीपनी कहते हैं। उदाहरण—'स्वर-मण्डल बाजत'।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

तीन अङ्गों से युक्त प्रबन्ध को पावनी कहते है। उदाहरण—'कच्छपिकाभिस्तत्र' इत्यादि।

अंगद्वय विशिष्ट प्रबन्ध को तारावली कहते है। उदाहरण—'कानू कालिन्दी'।

मणिपुर में प्रबन्धों का क्षेत्र बहुत बड़ा है। यहाँ अङ्गों के अनुसार पाँच के ही उदाहरण दिए हैं।

प्रबन्ध के अवयवीभूत चार धातु हैं : उद्ग्राह, मेलापक, ध्रुव, आभोग। ये संगीत के ज्यादा उपयुक्त हैं। नर्तन में इसका विस्तार नहीं दे रहे हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२०. खुतलोन्

नृत्त और नृत्य के समय हाथ की भिन्न-भिन्न मुद्राओं को मणिपुर के गुरु लोग स्थलविशेष में खुतलोन्, खुत्थेक, खुत्चाजगाई और हस्तक, इन शब्दों से व्यवहार करते हैं। (खुत् याने हाथ, लोन अर्थात् भाषा)

खुतलोन—नृत्य में अभिनय के समय हस्त के व्यवहार को खुत्लोन कहते हैं।

खुत्थके—हस्त संचालन।

खुत्चा जगोई—केवल अंगुलियों का संचालन है। शास्त्र में करकरण कहते हैं।

हस्तक—ऊपर के तीनों प्रकारों को कोई-कोई गुरु हस्तक के नाम से पुकारते हैं।

(नृत्य प्रकरण में हाथ शब्द मणिवन्ध से लेकर अंगुलियों के अग्रभाग तक का वाचक है।)

मणिपुर में वैष्णव धर्म के पूर्वकाल से प्रचलित लाई हरावबा नृत्य में माईबी अथात् स्त्री अथवा -पुरुष देवदासियाँ, लाईवौ जगोई (मानव सृष्टि रहस्य) स्वाभाविक हस्तमुद्राओं के द्वारा व्यक्त करती हैं। मणिपुरी नर्तन में मुद्राओं का यहीं से प्रादुर्भाव हुआ है।

जैसे युम्बि (स्तम्भ) सूचीमुख हस्त के द्वारा दिखाते हैं। काति (कैंची) कर्तरीमुख से, लैपोम्वा (कलिका) कोरकमुद्रा से, लैशात्पा (पुष्पविकास) पद्मकोष से, इस प्रकार हस्तव्यवहार होता है।

इस नृत्य में माईवियों में भी कहीं-कहीं पार्थक्य देखा जाता है।

खुतलोन् तीन भागों में विभक्त है।

(१) खुत्नामगी खुतलोन—एक हस्तविधेय मुद्रा (असंयुत हस्त)

(२) खुत् अनीगी खुतलोन = हस्तद्वयविधेय (संयुत हस्त)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(३) पुंग्लोल जगोईगी खुत्येक = नृत्त हस्त (अभिनय रहित नृत्त मुद्रा) ।

जैसे—चाम्प्राऑक्पी (अनुपल्लव)
चाम्प्रा हेक्पी (उद्वञ्चित)
थांग्यान्वी अथवा चाम्प्रारवाईबी (पक्षाञ्चित)
लाशिंगकाप्पी (संदंशविमोक)
खुजेंगलैबी (स्वस्तिक चक्र) इत्यादि ।

असंयुत हस्त

१. पताक

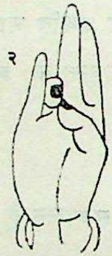
२. त्रिपताक

३. अर्धपताक

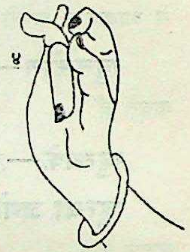
४. खटकामुख

५. संदंश

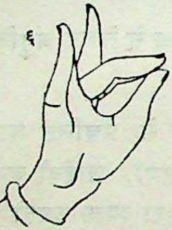
६. मृगशीर्ष

७. हंसास्य

८. अलपल्लव

९. भृङ्ग

१०. अंकुश

११. अर्धचंद्र

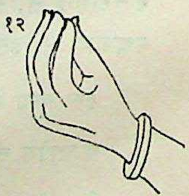
१२. कोरक

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

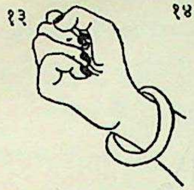

१३. मुष्टि

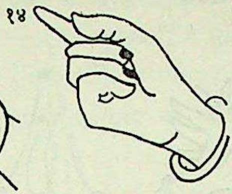

१४. अङ्कुर

१५. शार्दूलशय

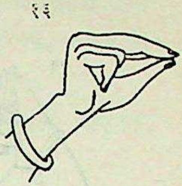

१६. काङ्गूल

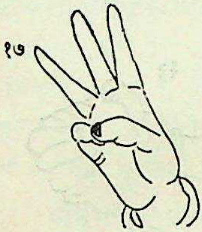

१७. त्रिशूल

१८. कर्तरीमुख

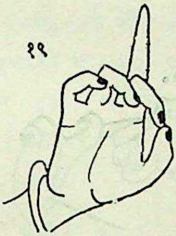

१९. शूचीमुख

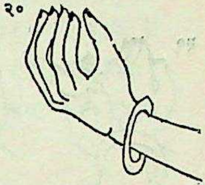

२०. पद्मकोश

२१. शिखर

२२. हंसपक्ष

२३. अहितुण्ड

२४. चतुर

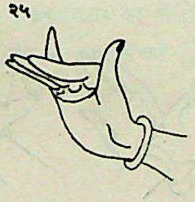

२५. धेनु

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

संयुत हस्त

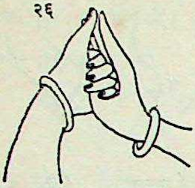
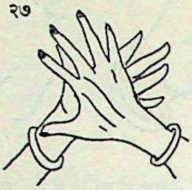
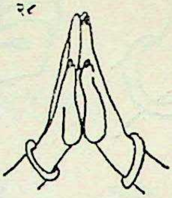

२६. शंख २७. चक्र २८ अञ्जलि

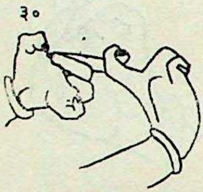
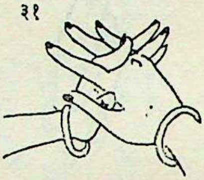

२९. तार्क्ष्य ३०. पाश ३१. कर्कट ३२. संपुट

३३. रंभासुम ३४. पुष्पपुट ३५. कोकिल

३६. स्वस्तिक ३७. शुक।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

रास—वैष्णवयुग में श्रीकृष्णलीलाएँ जब मणिपुरी नृत्य में प्रयुक्त होने लगीं तब वैष्णवीय नृत्य में गुरुजनों ने पूर्वकालीन कुछ मुद्राओं तथा शास्त्रोक्त मुद्राओं का अपनी निजी शैली में व्यवहार करना आरम्भ किया।

शास्त्र के अनुसार अभिनय की रीतियाँ तीन हैं—स्वानुगत, अनुगत, गमक।

स्वानुगत—आङ्गिक अभिनय से क्रिया अथवा भाव का आविष्कार करना। (पादाग्र से शिखाग्रतक पूरा अंग है। वह शास्त्रानुसार अङ्ग, प्रत्यङ्ग और उपाङ्ग नामसे त्रिधा विभक्त है। इन तीनों से होने वाला अभिनय आङ्गिकाभिनय कहा जाता है) उसके लिये गीत अथवा वाणी होना आवश्यक नहीं है। अबीर फेंकना, पिचकारी मारना, कन्दुक क्रीड़ादि में गीतादि शब्दों के बिना भी अंगसंचालन द्वारा अभिनय होता है जिसमें हस्तमुद्रा का प्राधान्य नहीं है। इसके द्वारा की गई नियत रचना को शास्त्र में नृत्यबन्ध कहते हैं।

अनुगत—इसमें गीतादि का अर्थ मुद्राओं के द्वारा पूरी तौर पर प्रदर्शित करते हैं।

गमक—सांकेतिक अभिनय है। गीत कथा को संक्षेप में सूचित करते हैं। प्रतिपदार्थ का अभिनय नहीं होता। इन दोनों को शास्त्र में नृत्य प्रबन्ध कहा है।

उपरोक्त तीन प्रकार के नृत्य में गमक का ही मणिपुरी नृत्य में वैशिष्ट्य है, फिर भी स्वानुगताभिनय का भी उपयोग होता है। क्योंकि मणिपुरी नृत्य भक्तिप्रधान होने से लोकजीवन का धार्मिक अंग बन गया है। इसमें प्रतिशब्द का पूरा अर्थ प्रकाशित करने से सामाजिक, धार्मिक मर्यादाओं का उल्लंघन होता है। इसलिये संक्षेप से और संकेत से ही गुरुजन व्यक्त करते हैं।

भारत की अन्यान्य नृत्यशैलियों से यह नृत्य शैली अपनी इस विशेषता के कारण भिन्न है। अभिनय में इसमें अतिशयता या अतिरेक नहीं होता। फिर भी शास्त्रानुसारी होकर स्वाभाविकता का अनुसरण होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२०. शाजत्

नाना शास्त्रों में नाना काव्यों में नाना कथाओं में पशु-पक्षियों के गति के साथ वर्णनीय विषय की तुलना करते हैं। मणिपुर में नृत्य की इन गतियों को शाजत् कहते हैं। जैसे राधिका की गति को देखकर, कहीं गजगामिनी हंसगामिनी इत्यादि मधुर कल्पनाएँ की जाती हैं। मणिपुर के गुरुओं ने इन उपमानों को अपने नृत्य में मूर्त स्वरूप दिया है और इन विशिष्ट गतियों को तत्तत्प्राणी के नाम से रूढ किया है।

जैसे —कांङ्गा शाजत् = हंसगति ।
शामू शाजत् = गजगति ।
खाम्राङ्ग चाक् शाजत् = खञ्जन गति ।
उरोक शाजत् = वंकगति ।
खुनू शाजत् = कपोत गति ।
शगोल शाजत् = अश्वगति
लाइरेन माथेक = सर्पगति ।
क्वाक मान्जोम = काकगति

ये गतियाँ रास तथा अधिकतर चलम् नृत्य में व्यवहृत होती हैं। कलाकार जब राधाकृष्ण वर्णन और अन्यान्य भाव प्रकट करना चाहते हैं, तब नृत्य में इन गतियों का यथास्थान समन्वय करते हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२१. मणिपुर में प्रचलित वाद्य

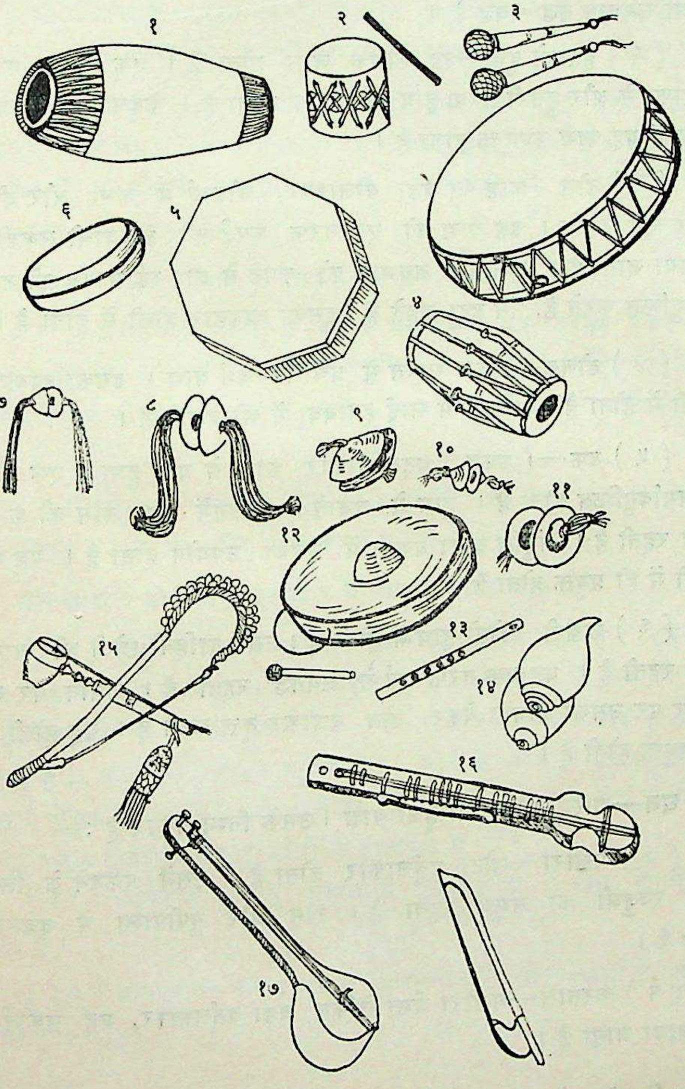

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

प्राचीन परम्परा में चार प्रकार के वाद्यों को वादित्र अथवा आतोद्य कहते हैं। ये चारों प्रकार मणिपुर में नाना रूपों में प्रचलित हैं।

आनद्ध—इस चर्मवाद्य के निम्न प्रकार हैं :—

(१) पुंग—मृदङ्ग, काष्ठ का बना हुआ पोला वाद्य जिसके दोनों मुख चर्म से आच्छादित रहते हैं। चर्म की वादियों से बँधा हुआ रहता है। (आ समंतात् नद्ध = बद्ध)।

(२) हराओ पुंग—यह ढोलक जैसा होता है। एक तरफ काष्ठ-शलाका से और दूसरी तरफ हाथ से बजाया जाता है। केवल लाई हरावबा नृत्य में यह वाद्य उपयुक्त होता है।

(३) ढोल—काष्ठ का बड़ा गोलाकार, चौड़ाई में कम, और दोनों तरफ चर्म से बद्ध। इस वाद्य को एक तरफ कपड़े की डट्टावाली लकड़ी से बजाया जाता है। लकड़ी के अग्रभाग को कपड़े से या रुई से गेंद की तरह अवगुण्ठित करते हैं, उसे डट्टा कहते हैं। इसका व्यवहार होली में होता है।

(४) ढोलक—उत्तर भारत में प्रचलित चर्म वाद्य। इसका व्यवहार होली में होता है। वर्तमान में लाई हरावबा में भी बजाते हैं।

(५) डफ—(डफत्) षट्कोणाकार काष्ठ से बना हुआ। एक बाजू में चर्मावगुण्ठित होता है। हाथ से बजाते हैं। उसमें एक बाँस की काड़ी लगी रहती है। अंगुलि द्वारा बजाने में उसका उपयोग होता है। यह भी होली में ही प्रयुक्त होता है।

(६) खञ्जरी—दोनों हाथ में होती हैं। उसमें दाहिनी छोटी और बायीं बड़ी रहती है। वह एक तरफ चर्म से अवनद्ध रहती है। जमीन पर या शरीर पर उसका आघात देकर, बोल बजाकर नृत्त करते हैं। यह होली में ही प्रयुक्त होती है।

घन—कांस्यादि से बना हुआ वाद्य। उसके निम्न प्रकार हैं :—

(७) मञ्जीरा—छोटा वर्तुलाकार होता है। उसमें पकड़ने के लिये लाल रज्जुओं का समूह रहता है। रास और नुपीपाला में बजाया जाता है।

(८) करताल—मञ्जीरा जैसा लेकिन बड़ा वर्तुलाकार, यह संकीर्तन में बजाया जाता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(९) झाल—बड़ा वर्तुलाकार और ज्यादा चपटा होता है। यह शयन, नामटाका, सनातनसंघ, रामानन्दसंघ, हरिदास निर्याण, मानश्रृङ्खला, आरती और गोष्ठलीला में बजाया जाता है।

(१०) रामताल—झाल से छोटा, लेकिन वैसा ही। होली में बजाया जाता है।

(११) मङ्ङ्ग—वहुत वड़ा वर्तुलाकार, चपटा, बीच में स्तनाग्र जैसा होता है। शयन, नामटाका, आरती इत्यादि में बजाते है।

(१२) सेम्बुङ्ग—यह ब्रह्मदेश से प्रवृत्त हुआ है। वहुत वड़ा गोल, वजनदार और चपटा, बीच में छोटा गोलाकार ऊँचा होता है। जो हाथ की मुष्टि से, या डण्डे से बजाया जाता है। गोविंदजी की आरती में और लाई हरावबा में प्रयुक्त होता है।

सुषिर—छिद्रयुक्त वाद्य। उसके निम्न प्रकार हैं :—

(१३) बांशी—यह बांस से बनाई जाती है। यह तिरछी पकड़कर मुँह से वायुपूरित करके दोनों हाथ की अंगुलियों से छिद्रों को पिहित-अपिहित करके (छिद्रों को वन्द और खुला करके) बजाई जाती है। रास में इसको बजाते हैं।

(१४) मैबुङ्ग—बड़े दो शङ्ख दो हाथों से पकडकर एक साथ मुँह से बजाये जाते हैं। ये रास और नटपाला में बजाये जाते हैं।

तत-वाद्य—वीणादि तन्तुवाद्य। ये तार से बनाये जाते हैं।

(१५) पेना—शास्त्र में इसको रावण हस्त वीणा कहते हैं। गुजरात और राजस्थान के रावणहत्था जैसा यह वाद्य है। नारियल के तुम्बे को चर्म से ढँककर बांस का डण्डा लगाते है। उस पर तार के वदले घोड़े के बाल लगाते हैं। बजाने का साधन धनुष्याकार, घोड़े के बाल से युक्त होता है। अन्त में घुंघरू लगे रहते हैं जो ताल देने में सहायक होते हैं। लाई हरावबा में यह प्रयुक्त होता है और राजाओं के गुणवर्णन में भी।

(१६) एसराज—उत्तर भारत में प्रचलित है। रास में प्रयुक्त होता है।

(१७) तानपूरा—भारत भर में प्रचलित है। गोष्ठ लीला में प्रयुक्त होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२२. पारिभाषिक शब्द

(मणिपुर में प्रचलित संगीत-नर्तन सम्बन्धी कुछ मेतेई शब्द)

पुङ्ग (मृदंग)

१. **पुंग्लोल** = मृदंग के बोल ।

२. **पुंग्खोल** = मृदंग की ध्वनि ।

३. **खुत्लोल** = मृदंग बजाते समय हस्त-संचालन ।

४. **खतपा** = मृदंग पर अंगुलियों का सूक्ष्म चालन ।

५. **चापोर** = दाहिने हस्त की पाँच अंगुलियों से आघात ।

६. **टुका** = अनामिका वक्र करके और तर्जनी से दाहिने बाजू में आघात करना ।

७. **मरु-मनाउ हन्बा** = मृदंग के बायें (मरु) और दाहिने (मनाउ) दोनों बाजुओं में एक ही साथ एक बाजू पर दोनों हाथों से बजाना ।

८. **पुंगमरु** = मृदंग का काष्ठमय अंग ।

९. **पुग्मरि** (पुंग्लि) = मृदंग बाँधने की चमड़े की पट्टी ।

१०. **थांग्गंग्मरी** = मृदंग को स्कन्ध पर लटकाने का लाल पट्टा ।

११. **पुंग्योम्** = मृदंग के ऊपर लगाने का सफेद कपड़ा ।

१२. **पुंगखुदोप** = पीतल की कड़ी । मृदंग के दो बाजुओं में लगाई जाती है जिसमें थांग्गग्मरी (लाल पट्टा) डालते है ।

१३. **गाप**—मृदंग के दोनों बाजू चमड़े के ऊपर लेप करने की काली स्याही ।

ताल

१. **परींग** = (मपुंग, तान्बुङ्ग) ताल का ठेका ।

२. **मपी** = ताल के मूल स्वरूप का बोधक पाटाक्षर जैसे तान्चप् मपी, मेन्कूप् मपी ।

३. **तान्बी** = हरेक पादभाग की ताली ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

४. **तान्कोक्** = ताल का मुख, अर्थात् पहली ताली या सम ।

५. **तान्याई** = ताल के मध्य भाग में आनेवाली ताली ।

६. **तान्मई** = तालकी अंतिम ताली ।

७. **तान्था** = ताली देना ।

८. **हाईदोक्पा** = खाली ।

९. **तालहाई** = कोई गाना चलता हो तब बोल कहीं से भी उठाते और कहीं भी छोड़ते हैं। लेकिन जब योग्य और सुन्दर रीति से कोई उठाता या छोड़ता है तत्कालीन प्रशंसात्मक शब्द ।

१०. **कोईचा** = आवर्तन ।

११. **तान्चेत्** = ताल का ढंग ।

१२. **लोयचेत्** = विभिन्न लय की गति ।

१३. **चांग्चेत्** = समान लय से जाना । (एक ही लय में बोल की गति)

१४. **अतप्पी** = विलम्बित लय ।

१५. **मयाई** = मध्य लय ।

१६. **अथुबी** = द्रुत लय ।

१७. **हाइगत्पा** = ढोल बजाते-बजाते अचानक बोल के लय को द्रुत कर देना ।

१८. **दुनी** = दुगुना ।

१९. **अचौंग्बी** = कूद कूद कर छन्द में बोल बोलने की रीति ।

२०. **असेत्पी** = आड़-आड़ में बोल बजाना ।

२१. **सेप्चानबा** = तालयुक्त बोल हो, फिर भी ऐसा बजाये कि तालहीन मालूम हो ।

२२. **हन्जीन्बा** = बोल की पुनरावृत्ति करना ।

२३. **अलंकार पुग्लोल** = तोड़ा अथवा प्रस्तार ।

२४. **नाईतोम** = एक गुरु का एक ताल पर एक अलंकार ।

२५. **परेंग** = एक गुरु का एक ताल पर एक से अधिक अलंकारों का समूह ।

२६. **बोल** = विशेष प्रकार का अलंकार । इसमें भिन्न-भिन्न लय होती है तथा तिहाई से इसकी समाप्ति होती है ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२७. **आखर** = पहले गीत की पुनरावृत्ति के साथ बोल की जो रचना थी, वही अलंकार के रूप में प्रचलित है। वर्तमान में वह गीत नहीं होता किन्तु उसके संगत के बोल बजाते हैं। वे 'आखर' के नाम से प्रचलित हैं।

२८. **श्लोकपुंग्लोल** = श्लोक के साथ जो बोल रचनायें थीं, वर्तमान में उनका श्लोक के बिना अलंकार के रूप में व्यवहार होता है। वे श्लोक पुंग्लोल के नाम से प्रचलित हैं। इनमें आखिरी बोल नियत होते हैं और प्रणाम करके समाप्त किये जाते है।

२९. **मुखबोल** = कविता को छन्द में बोलकर मृदंग पर वैसे ही प्रकाशित करते हैं।

३०. **शैकोन्नबी** = गीत के साथ बजनेवाले बोल दो प्रकार के हैं।
एक जाति के बोल-गीत के छन्द का ठीक अनुसरण करते हैं।
दूसरी जाति के बोल-गीत के छन्द के साथ ज्यादा सम्वन्ध नहीं रखते हैं।

३१. **आखाईबा** = एक बोल में से दूसरे बोल में जाने के लिये बीच का पृथक्कारी बोल।

३२. **थाबा (आथाबा)** = समाप्ति का बोल।

३३. **महादाथावा** = खाली में समाप्त करना।

३४. **मान** = तेहाई।

३५. **तान्कोकूदा थावा** = ताल की प्रथम ताली में समाप्त करना।

३६. **जुगलदा थाबा** = ताल के आरम्भ में एक के बाद एक, ऐसी साथ की दो ताली में दूसरी ताली में समाप्त करना। शास्त्र में इसको 'वर्धमान' कहते हैं।

३७. **तान्मईदाथावा** = ताल की आखिरी ताली में समाप्त करना। शास्त्र में इसको 'हीयमान' कहते हैं।

३८. **आराओबा** = ताल के छोटे स्वरूप को बड़ा करना।

३९. **चोलाक् थांग्** = किसी किसी बोल की रचना की ससाप्ति के समय खींच करके धीमी लय में छोड़ना।

४०. **भांगा** = तालहीन निश्चित रचना। शास्त्र में इसको अनिवद्ध कहा है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

४१. **सारा** = यह भी अनिवद्ध रचना है, फिर भी भांगा जैसी गंभीर प्रकृति की रचना नहीं है।

४२. **वाह्यौदोक** = छोटे मोटे अनुष्ठान का प्रारम्भिक बोल। इसकी प्रकृति दूसरी रचनाओं से उत्तान (सरल) है।

४३. **राग** = (अहौवी) = विशिष्ट प्रकार के निर्दिष्ट बोल की विशिष्ट प्रकार की छन्दोमय रचना। इसको संकीर्तन के प्रारंभ में नियमानुसार वजाते हैं। इसकी रचना गंभीर होती है। और जो भी अनुष्ठान में वजायेंगे उसका मूर्त स्वरूप है।

४४. **संचार** = विशिष्ट बोल और छंद रचना द्वारा उपरोक्त राग में प्राणप्रतिष्ठा करते हैं। यह रचना राग के वाद वजाते है।

४५. **अन्वा** = ध्रुमेल के अन्तर्गत छोटे-छोटे संचार।

४६. **तान्चप्** = यह चार अथवा आठ मात्रा का एकताल है। अथवा एक रचना में एक ताल वजाकर दूसरे ताल में गिरने से दूसरे ताल को तान्चप् कहते हैं। जैसे 'नीरनीरद' ब्रह्मताल के अन्त में ताल मेलमातेक आता है। इस मेलमातेक को मेलतान्चप् कहते हैं।

राजमेल

(७ मात्रा का ताल—अन्य मत में १४ मात्रा)

१. **मेन्बुङ्ग** = राजमेल का परिंग (ठेका)।

२. **मेलह्यौ** = मेल का प्रारम्भ।

३. **मेनगोई (मेन्कोइ)** = एक विशिष्ट प्रकार की मेल की बोल-रचना, जो घूमते हुए जाता हो, ऐसा लगता है। राजमेल के वदले भी मेनगोई वजा सकते हैं।

४. **भूषणा** = राजमेल में ही एक विशिष्ट बोल रचना।

५. **मेलमातेक** = राजमेल में मध्य लय में एक छोटी रचना।

६. **मेलतान्चप्** = एक रचना में एक ताल वजाकर दूसरे ताल में गिरने से दूसरे ताल को तान्चप् कहते हैं। अगर इस तान्चप् की जगह मेलमातेक वजाया तो उसको मेलतान्चप् कहते हैं।

७. **अवोन्वी** = एक छन्द या लय से दूसरे लय में जाना।

८. **अखोम्बी** = जिस बोल के द्वारा सवको बोल समाप्त करने का निर्देश किया जाय।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

९. **बेड़ीघाट** = निश्चित बोल में गोलाकार घूमना ।

१०. **लम्बीघाट** = राजमेल में विलम्बिल बोल ।

११. **सेतुघाट** = विलम्बिल में से मध्य लय में जाने का मध्यवर्ती बोल ।

१२. **काटा** = (१) कोई एक छन्द चलता हो उसको दूसरे बोल से काट देने से काटा कहते हैं, जो मेल में आता है ।

(२) किसी ताल में आखिरी ताली काट देने से वह अलग ताल के रूप में परिणत होता है । जैसे रूपक पर से रूपक काटा, जयदिक् परसे जयदिक् काटा ।

१३. **गुरुघाट** = निश्चित बोल वजाकर प्रणाम करते हैं । यह नटराग में अन्तर्भूत है ।

१४. **येत्-ओई** = चोलोम में दाहिने और बाएँ का समान भाग होता है । और हमेशा दाहिने बाजू से शुरू करने के लिये यह प्रथा चलाई गई है । राजमेल ताल में प्रायः दो या चार आवर्तन होता है जिससे दाहिने और बाएँ बाजू सरीखा संतुलन हो जाता है ।

नर्तन

१. **जगोई** = नर्तन ।

२. **फिबम** = विशिष्ट ढंग ।

३. **फिरेप** = मूल स्थानक ।

४. **फैनम्बा** = कोई भी एक जानु वक्र हो और उसके साथ पूरा शरीर थोडा नीचे नमे ।

५. **थोङ्खोङ्क** = मृदंगचलन का स्थानक विशेष ।

६. **साथेक** = हालचाल ।

७. **अरैबी** = भ्रमरी या घूमने के विशेष प्रकार ।

८. **लोंग्लै** = दाहिने बाजू से घूमना (दक्ष भ्रमरी)

९. **उप्लै** = बाएँ तरफ से घूमना (पिधान भ्रमरी) ।

१०. **चालि अरैबी** = चाली की नृत्तरचना में दायीं और बायीं तरफ घूमना ।

११. **वाक्लै** = वैठकर जानुपर दाहिनी तरफ से घूमना ।

१२. **लोंग्लैमातेक** = कूदकर नमकर दाहिनी तरफ से घूमना ।

१३. **वाकचोंग्बा** = स्वस्तिक पाद करके दोनों बाजू कूदना ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१४. **चाली अफैबी** = दायीं और बायीं तरफ जाना-आना ।

१५. **कारन् चन्बा** = पैर अथवा हाथ में स्वस्तिक ।

१६. **चक्रलैबा** = एक जगह पर पैर के अग्र भाग पर बैठकर, दोनों हाथ पर भार देकर दाहिना पैर घुमाकर रखना ।

१७. **खोंग्थामखल** = पैर रखने का विशिष्ट ढंग । (पाद भेद) ।

१८. **खोंग्पाक्** = संपूर्ण दोनों पैर भूमि पर रखना (समपाद) ।

१९. **खुनिंग** = एक पैर की एड़ी भूमि पर स्थापित करना (अञ्चित) ।

२०. **खोंग्चेप्** = एक पैर कनिष्टिका की तरफ से अंगुलियाँ मोड़कर उनका पृष्ठभाग जमीन पर लगाकर पैर रखना । (कुञ्चित) ।

२१. **खुदोन** = एक पैर अंगुष्ठ के अग्रभाग पर खड़ा करना (सूचीपाद) ।

२२. **खोंग्दोन** = एक पैर का पदतल का अग्रभाग जमीन पर रखना (अग्रतल संचार)

२३. **खोंग्चत्** = पैर का चलन अथवा चारी ।

२४. **काडवा** = एड़ी से आघात करना ।

२५. **अचोंग्बी** = कूदने के विभिन्न भेद (उत्प्लुति या उत्प्लवन) ।

२६. **अफम्बी** = बैठने के विभिन्न ढंग (उपविष्ट) ।

२७. **खुत्थेक** = मणिवन्ध से अंगुली पर्यन्त हाथ का चलन ।

२८. **खुत्चा जगोई** = अंगुलियों का संचालन ।

२९. **खुत्लोल** = हस्तमुद्रा ।

३०. **पुङ्लोल जगोईगी खुत्थेक** = नृत्तहस्त क्रिया के प्रकार ।

३१. **चंप्राह्वेकूपी** = उद्वञ्चित ।

३२. **चंप्राऑकपी** = अनुपल्लव ।

३३. **चंप्राखाइबि** = अथवा थाङ्यानवी = पक्षाञ्चित ।

३४. **खुजेंग्लैबी** = स्वस्तिक चक्र ।

३५. **लशिंगकाप्पी** = संदंशविमोक ।

३६. **आथावा** = चन्द्रार्ध पुटित ।

३७. **धाटतावा** = दो तरफ बैठना । पहले बायीं तरफ बाया जानु नीचे करके, फिर दाहिनी तरफ दाहिना जानु नीचे करके बैठना ।

३८. **ईथक ईपोम** = तरंग की तरह अंगचालन ।

३९. **थेकूपा** = भंग अथवा संचालन ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

४०. **माथंगचत्पा** = ताल देने के बाद पैर रखना ।

४१. **नाईतोम** = एकक नृत्य ।

४२. **तोम्बांग्** = दो गोपियाँ कृष्ण या राधा का एक के बाद एक वर्णन करें ।

४३. **पोन्था** = पण लगाना ।

४४. **मपोप जगोई** = रास में तीन भिन्न ताल पर गोपियों का नियत नर्तन ।

४५. **मकोक चिंग्बि** = रास की मुख्य नर्तकी ।

४६. **मथङ्चत्पी** = मुख्य नर्तकी की अनुगामिनी ।

४७. **घाट** = एक लम्बी नर्तन रचना के अन्दर छोटे भागों को घाट कहते हैं ।

ये गोष्ठभंगी और गोष्ठ वृन्दावन भंगी में होते हैं ।

गीत

१ **इशै** = गान ।

२. **खोन्दोक** = कंठध्वनि ।

३. **खोञ्जेल** = सुर का थोड़ा ज्ञान आना ।

४. **खोलह्वाइ** = स्वर भंगी ।

५. **अनेम्बा** = नीचा स्वर ।

६. **अवाङ्ग्वा** = ऊँचा स्वर ।

७. **अमेङ्बा** = अति मधुर ।

८. **अचिङ्ग्बा** = खींचना ।

९. **अककपा** = तोड़कर रुककर गाना ।

१०. **अतिङ्बा** = शुद्ध स्वर ।

११. **लैना लैना ह्वायबा** = घुमा घुमा कर तान लेना ।

१२. **ह्विक्ना ह्वायबा** = रुदन स्वर ।

१३. **अयुङ्बा** = उच्च स्वर ।

१४. **अकन्बा** = जोरदार ।

१५. **घर** = राग अलाप में स्थायी ।

पञ्चम = अन्तरा ।

दीर्घ = आभोग ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१६. **अनिकूपा** = कम्पन ।

१७. **शैशकशैदा** = गाने का ढंग ।

१८. **खोन्जेल मतेक** = कोमल स्वर ।

संस्कृत पारिभाषिक शब्द

(गोविन्द संगीत लीला विलास के अनुसार नर्तन सम्बन्धी कुछ **संस्कृत** शब्द)

नर्तन = अनादि परम्परा से रूढ़ नियम बद्ध गात्र विक्षेप को नर्तन कहते हैं ।

इसके तीन प्रकार हैं, नाट्य, नृत्य, नृत्त :—

नाट्य = चतुर्विध अभिनय से प्रदर्शित कोई कथा या घटना जिससे रसोत्पत्ति होती है, वह नाट्य कहलाती है ।

नृत्य = नृत्य में आङ्गिकाभिनयादि से गीतप्रतिपाद्य रस व्यञ्जक भाव उत्पन्न किये जाते हैं ।

नृत्त = ताल तथा लय पर आधारित अर्थविहीन मनोहर गात्रविक्षेप को नृत कहते हैं ।

अभिनय = अन्तःकरण के भावों को और वाह्य पदार्थों को प्रकाशित करनेवाली अङ्गोपाङ्गादि को जो विशिष्ट रचना या भावभंगी होती है, उसे अभिनय कहते हैं । उसके आङ्गिक, वाचिक, सात्विक, आहार्य चार प्रकार हैं ।

(१) **आङ्गिक** = अङ्गों से किये जाने के कारण आङ्गिक कहते हैं । अङ्गों के तीन प्रकार हैं, अङ्ग, प्रत्यङ्ग, और उपाङ्ग । उसमें **अंग** के छः प्रकार हैं—शीर्ष, हस्त, उर, पार्श्व, कटि तट, पाद ।

प्रत्यङ्ग दस हैं = ग्रीवा, स्कन्ध, बाहु, पृष्ठ, उदर, मणिबन्ध, ऊरू, जानु, जङ्घा, कूर्पर ।

उपाङ्ग = अङ्ग के घटक भागों को उपाङ्ग कहते हैं । मस्तक में बारह उपाङ्ग हैं । हस्त में एक और पैर के चार हैं ।

(२) **वाचिक** = कथा, प्रवन्ध, गीत इत्यादि के अर्थ के अनुसार शब्दोच्चारण में जो ध्वनि तारतम्य होता है और जो बोध विशेष में उपयुक्त होता है, उसे वाचिक अभिनय कहते हैं ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(३) **आहार्य** = तत्तदर्थ या व्यक्ति विशेष सूचित करने के लिये वेषभूषा, पुस्त अथवा सजीव प्रत्यक्ष वस्तु इत्यादि का उपयोग आहार्य अभिनय है।

(४) **सात्विक** = सत्त्व याने अन्तःकरण में उत्पन्न होनेवाले भावों का शरीर पर बाह्य परिणाम, जैसे—स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, स्वरभङ्ग, वेपथु, वैवर्ण्य, अश्रु, प्रलय। ये आठ प्रकार के हैं, इन्हें सात्विक कहते हैं।

नाट्य, नृत्य, नृत्त इन तीनों के मार्गी तथा देशी दो भेद हैं।

मार्गी = गन्धर्वादि परम्परा का शास्त्रानुसारी नर्तन, गीत, वाद्य मार्गी कहलाता है।

देशी = तत्तद्देश के लोगों की परम्परा में प्रचलित नर्तन, गायन, वादन देशी कहलाता है। इसके सम विषम दो भेद हैं। विशेष अभ्यास के बिना जो स्वयं आत्मसात् होता है वह सम है।

जो अभ्यासगम्य है और जिसमें लौकिक परम्परा के नियमों का बन्धन रहता है, वह विषम है।

नृत्य और नृत्त के दो प्रकार हैं—ताण्डव और लास्य।

तांडव = औद्धत्य और कठोरता का प्राधान्य जिसमें होता है और जो पुरुष द्वारा ही किया जाता है वह ताण्डव है।

लास्य = जिसमें मार्दव, कोमलता प्रतीत होती है और जो स्त्रियों द्वारा ही किया जाता है, वह लास्य है।

ताण्डव के प्रकार

गुण्ठनम् = अनुस्यूत क्रियाएँ, मर्यादित संचलन, सब क्रियाओं में जानुओं में ज्यादा अन्तर नहीं होता। इसमें कूदना-बैठना ज्यादा रहता है।

चलनम् = जिसमें पुरुष स्थानकों का प्रयोग ज्यादा होता है। पैरों में अन्तर अधिक रहता है। इसमें ऊँची-नीची नाना प्रकार की गतियाँ ज्यादा होती हैं। इसमें गुण्ठन की अपेक्षा औद्धत्य ज्यादा होता है, कहीं-कहीं मन्द गति, कहीं झञ्झावात की तरह गति रहती है, यह चलन ताण्डव है।

प्रसरणम् = जिसमें क्रियाएँ अनिर्बन्ध रहती हैं। विमुक्ताचारी ज्यादा होती है। हाथ पैर की क्रिया फेंकने की तरह होती है, यह प्रसरण ताण्डव है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

लास्य के प्रकार

सीमिताङ्गम् = जिसमें गति विलम्बित तरङ्गों की तरह दोलायमान और अनुस्यूल होती है, सब क्रियाएँ गम्भीरता से होती हैं। वक्षःस्थल शिथिल स्वाभाविक नम्रता से युक्त हो, पैरों में अन्तर थोड़ा हो, वह सीमिताङ्गम् कहा जाता है।

स्फुरिताङ्गम = सीमिताङ्गम् की तरह होते हुए भी जिसमें क्रियाएँ अनिर्वंध और खुलीं हों, मध्य और द्रुत लय हो, चारियों में पद चलन कठिन हो, भ्रमरी ज्यादा हो, सब क्रियायें स्फूर्ति युक्त हों और चंचल हों वह स्फुरिताङ्ग है।

नृत्यहस्त

नृत्य में पदार्थ बोध के लिये इनका प्रयोग होता है।

असंयुत हस्त = इसमें एक हस्त की ही क्रिया रहती है। इसके पताक, त्रिपताक इत्यादि २५ भेद हैं।

संयुत हस्त = उभय हस्त साध्य क्रिया। शंख, चक्र इत्यादि १२ प्रकार हैं।

नृत्तहस्त

असंयुत हस्त के पचीस प्रकारों में से ९ प्रकार केवल सौन्दर्यवर्धन के लिये नृत्त में प्रयुक्त होते हैं। वहाँ अर्थ की विवक्षा नहीं रहती। जैसे पताक, मुष्टि, चतुर, संदंश, इत्यादि। नृत्त में उपयोग करते समय, उनको नृत्त हस्त क्रिया कहते हैं जैसे संदंशविभोक, उद्वञ्चित इत्यादि। संयोग वियोग भेद से क्रियाएँ नाना हैं।

कर-करण = अग्रहस्त की विशेष क्रियाएँ। जिनसे पदार्थ निर्देश नहीं होता। ये नृत्य नृत्तकला में हस्त क्रियाओं का अखण्डत्व रखने के लिये किए जाते हैं। आवेष्टित, उद्वेष्टित, व्यावर्तित, परिवर्तित—इसके चार प्रकार हैं।

स्थानक = शरीर के अंगोपाङ्गों की विशिष्ट रूप से निश्चल स्थिति। इसके दो भेद हैं—मूल भङ्ग (पुरुष स्थानक) और सभङ्ग (स्त्री स्थानक)।

चारी = पैर के अग्रभाग से कमर तक के अंगों की एक साथ जो मनोरम क्रियाएँ हैं, वे चारी नाम से प्रसिद्ध हैं। इसके संयता और विमुक्ता दो भेद

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

हैं। संयता = मर्यादित, विमुक्ता = अनिर्बंध। इन दोनों के रसान्तिका और संप्लुता दो उपभेद हैं।

रसान्तिका = जिसमें पदतल का पृथिवी संयोग अखंड रहता है।

संप्लुता = जिसमें कूदने से पदतल का पृथिवी संयोग नष्ट होता है। इन दोनों में विविध कियाएँ होती हैं।

गतिभङ्ग = जिसमें करचरणादि शरीरावयवों की मनोरम क्रियाएँ एक साथ होती हैं।

भ्रमरी = हस्तपादादि अंगक्रियाओं के साथ शरीर का भ्रमण भ्रमरी है। इसके लास्य और ताण्डव दो भेद हैं। लास्य भ्रमरी के पिधाना, प्रपिधाना इत्यादि भेद हैं। ताण्डव भ्रमरी के प्लुतिपिधाना और प्रप्लुति पिधाना इत्यादि भेद गुण्ठन ताण्डव में होते हैं।

भङ्गावली = सभङ्ग स्थानकों के बीच में गतिभङ्ग अथवा भ्रमरी, अथवा दोनों अखण्डता के साथ परस्पर ग्रंथित जैसे हों तो वह भङ्गावली होती है। इसका लास्य ताण्डव दोनों में प्रयोग होता है।

नृत्तालङ्कार = ताल प्रस्तार के ऊपर जो नृत्त होता है, वह नृत्तालङ्कार है।

नृत्तवन्ध = ताल प्राणादि के अनुसार तथा बोलों की विशिष्ट रचना तदनुसारिणी नृत्तरचना को नृत्तवन्ध कहते हैं। जिस ताल के प्रस्तारानुसार नृत्तवन्ध हो, उस ताल के नाम से ही वह नृत्तबन्ध व्यवहृत होता है।

नृत्तप्रबन्ध = चार धातु और छः अगों के दो, दो या तीन, तीन के यथासंभव मिश्रण से जो सुंदर गीत रचना होती है, उसे प्रबन्ध कहते हैं और तदनुसारी नृत्त को नृत्तप्रबन्ध कहते हैं।

नृत्य विशेष

भाव प्रकाशक नृत्य तीन प्रकार का होता है—स्वानुगत, अनुगत, गमक।

स्वानुगत = अङ्गोपाङ्गों के अभिनय से ही जिसमें भाव प्रकाशित किये जाते हैं, वाणी का प्रयोग नहीं किया जाता वह स्वानुगत है।

अनुगत = जिसमें प्रबन्ध गीतादि के अनुसार आंगिकाभिनय से भाव अभिव्यक्त किये जाते हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

गमक = जिसमें प्रत्येक शब्दार्थानुसार अभिनय नहीं होता, लेकिन अंशाभिनय होता है और शेषार्थ अनुमान से बोधित होता है।

नृत्यबन्ध = जिसमें एक संपूर्ण घटना, यावच्छक्य यथायोग्य अभिनय से दिखाई जाती है, वह नृत्यबन्ध है।

नृत्य प्रबन्ध = नृत्यबंध का विषय प्रबन्ध के रूप में रचा जाय, और तदनुसार नृत्य हो तो उसे नृत्य प्रबन्ध कहते हैं।

गतिभेद = अश्व, हाथी, खंजन, हंस इत्यादिकों की गति का नर्तन में अनुकरण हो तो उसे गतिभेद कहते हैं।

यतबन्ध = जिसमें नर्तकों की संख्या नियत रहती है, वह यतबन्ध है। इसके तीन प्रकार हैं। एक व्यक्ति के यतबंध को अनन्य कहते हैं। दो व्यक्तियों से हो तो युगल, और तीन या उससे अधिक करें, तो वह कदम्ब नामक यतबन्ध होता है।

इन तीनों में से अगर किसी के नर्तन द्वारा कोई आकृति विशेष निर्मित हो तो उसे चित्र बन्ध कहा जाता है।

मिथोबन्ध = दो नर्तक परस्पर अंग या उपाङ्गों को स्पर्श करके या पकड़कर नर्तन करें तो वह मिथो बन्ध होता है।

हल्लीसक नृत्त = जो नृत्त मण्डलाकार खड़ी होकर स्त्रियाँ करती हैं, और केन्द्र में एक पुरुष होता है, वह हल्लीसक है।

छालिक्य नृत्त = जिसमें मिश्रभाव से नृत्त, नृत्य का प्रयोग हो, और नर्तक मानो परस्पर स्पर्धा करते हुए नर्तन करें तो वह छालिक्य नृत्त होता है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२३. रासकालीन वेशभूषा

नाट्य के चार अभिनयों में आहार्याभिनय महत्वपूर्ण अंग है। उससे नट-नटियों की भूमिका का बोध होता है और वह रसोत्पत्ति में सहायक होता है। वेशभूषा के अलावा आहार्याभिनय से रंगभूमि का प्रसाधन भी होता है। किंतु यहाँ वेशभूषा का ही विचार किया जाता है।

रासलीला की वेशभूषा श्री भाग्यचन्द्र के स्वप्नादेशानुसार ही प्रथम हुई। और उसी की परम्परा चलते-चलते आज के चालू रूप में परिवर्तित हुई। घागरे का स्वरूप पहले-पहल आजकल जितना कड़क नहीं था। वह उत्तरोत्तर ज्यादा कड़क हो गया।

१. कृष्ण

(१) **फैजोम** = पीली धोती पीताम्बर।

(२) **खोंगदोप** = पादाग्र से पार्ष्णि तरफ उभयत्र रहने वाला।

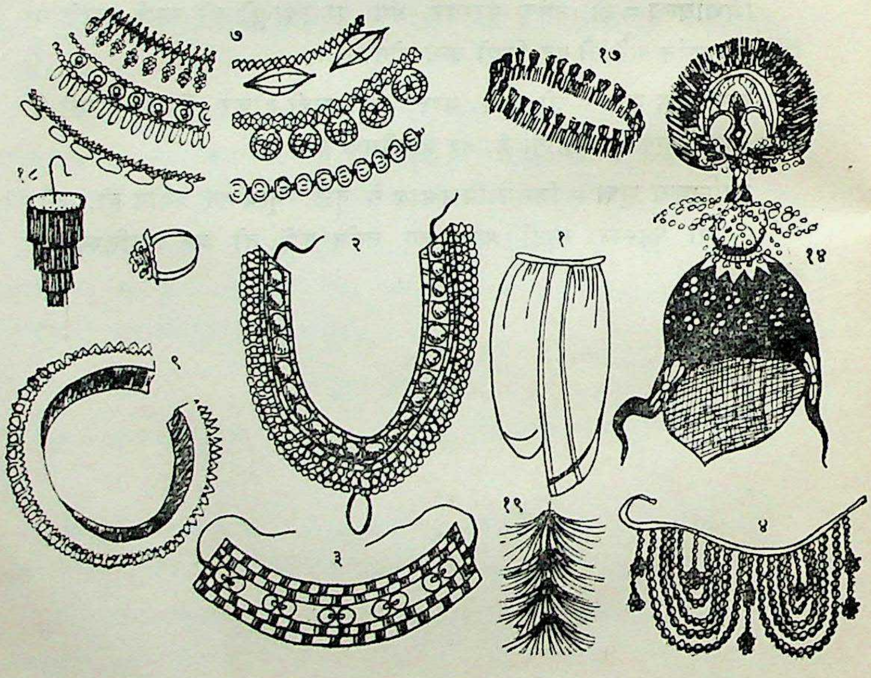

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(**घुंघुरु**) = मौक्तिकावली जैसा आभूषण ।

(३) **खोंग्जी** = पार्ष्णि के ऊपर धारण करने का ।

(**नूपुर**) क्षुद्रघण्टिकाएँ लगी रहती हैं । आजकल स्थानीय नूपुर में क्षुद्रघण्टिकाएँ नहीं रहतीं । खाली मौक्तिकादि मणियों से अन्वित रहता है ।

(४) **धरा** = मालाओं की तरह अलंकृत पश्चाद् भाग में कमर पट्टे की तरह ।

(५) **खाओन** = स्कन्धों के ऊपर से दोनों बाजू पट्टाओं में लटकाया हुआ लंबा चतुष्कोणाकार पत्र विशेष जो जरी और मणियों से सुशोभित रहता है ।

(६) **ख्वांग्नप्** = पुरः पत्रावलम्बित कमरपट्टा जैसा । ख्वांग्गोई कमरबन्धक पट्टे को कहते हैं । यह जरी और कांचमणियों से युक्त रहता है ।

(७) **लिक्परेंग** = कण्ठमाला ।

(८) **लैपरेंग** = कपड़े से बनी माला ।

(९) **खुजी** = कंकण ।

(१०) **खुत्तोप** = इसको रतनचूड़ कहते हैं । अंगुलियों में अन्वित करके कर पृष्ठ पर धारण किया जाता है ।

(११) **तानूखा** = यह कूर्पर का भूषण है ।

(१२) **ताल** = कूर्परोपरिभाग में धारण किया जाता है ।

(१३) **पाम्बोमयाई** = (पाम्बोम् फावा) ताल के ऊपर का एक भूषण ।

(१४) (क) **नाखूभ्** = काली मखमली टोपी ।

(ख) **मुकुट** = टोपी के ऊपर लकड़ी का ।

(ग) **चिरोंग** = टोपी के ऊपर मुकुट पर झालर ।

(घ) **चूडा** = काष्ठ मुकुट के ऊपर गोलाकार मयूरपिच्छ ।

(१५) **ख्वाङ्गनप्** = मुकुट के पीछे झूलनेवाला पट्टा । सजाया हुआ, पीठ पर लटकता है जैसे नं० ६ ।

(१६) **कोकनम्** = कपड़े की पट्टी के ऊपर रजत की टीकी लगाकर भालप्रदेश के ऊपर के भाग में धारण किया जाता है ।

(१७) **नाचोम्** = कर्ण में लटकने वाला आभूषण ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(१८) **चेरै** = टोपी के पीछे कागज की बनाई सफेद झालर।

(१९) **पीसिनद्राई** = वक्ष और पीठ में उज्ज्वल चमकने वाली धातु की शृङ्खला का मालावृन्द। वर्तमान में यह गहना विशेष प्रचलित नहीं।

२. राधा और गोपियों की वेशभूषा

(वसन्तरास, महारास, कुन्जरास)

(२०) **कोकतुम्बी** = बालों को शीर्षमध्य भाग में बाँधकर धम्मिल्ल करते हैं और उसके ऊपर काला कपड़ा लगाकर नाना अलङ्कार चढ़ाते हैं। इस समय कृत्रिम बनाया हुआ धम्मिल्ल व्यवहृत होता है।

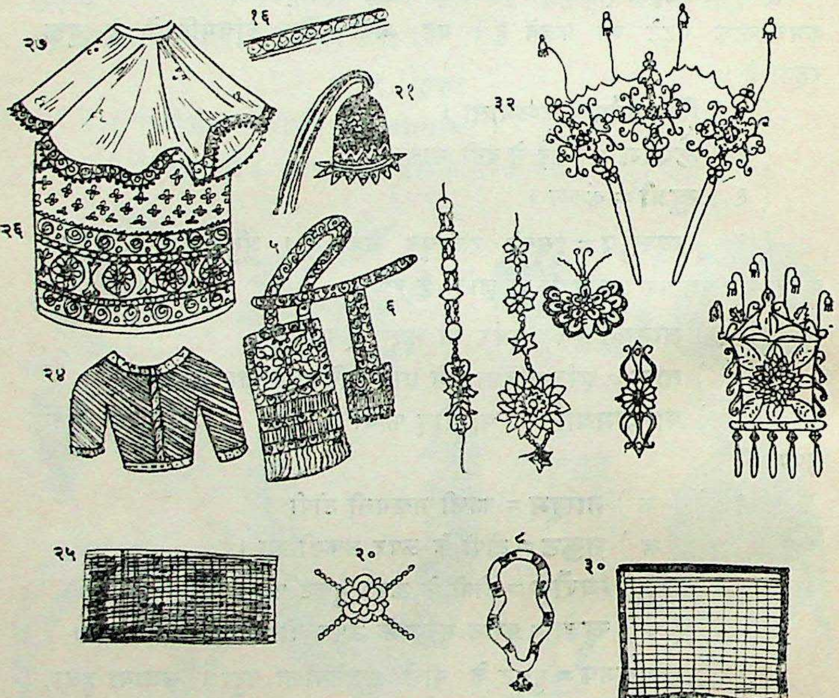

(२१) **कोकनम्** = १६ वें अङ्क में कृष्ण वेश में वर्णित है।

(२२) **चूवालै** = कोकतुम्बी से लटकाई हुई जरी की झालर जो ग्रीवावलम्बी होती है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(२३) **रेशमफुरित** = काली अथवा हरी मखमली चोली।

(२४) **थबाकयेत्** = सादा कपड़ा जो वक्ष के ऊपर बाँधा जाता है।

(२५) **कुमीन्** = टीकी और जरी से अलंकृत कड़क चण्डातक (घागरा)। चन्द्रावली और राधा का हरे रंग का और गोपियों का लाल।

(२६) **पोशवान्** = कुमीन के ऊपर जानु तक लम्बा, घेरवाला, सफेद जरी के कपड़े का अर्ध चण्डातक।

(२७) **खाओन** = कृष्ण वेशभूषा के पाँच नंबर जैसा पट्टा जो सिर्फ दाहिनी तरफ धारण किया जाता है।

(२८) **खवांगगोई** = कृष्ण का ६ नंबर।

(२९) **माइखुम्** = मस्तक के ऊपर की ओढ़नी, जो मुख और मस्तक को ढँकती है।

(३०) **पिसिन्द्राई** = देखिए कृष्ण के २० नंबर की तरह। इसके अतिरिक्त और सब गहना कृष्ण की तरह ही है।

३. नित्यरास की वेशभूषा

कृष्ण की वेशभूषा पूर्वोक्त ही है। गोपियों में जो विशेष है, उसे लिखते हैं, शेष सब यथापूर्व।

(३१) **झाँपा** = केशकलाप का जूड़ा पृष्ठ भाग में बनाकर उसके ऊपर बीच में समजीनम् और ऊपर समजीथेत् नामक अलङ्कार लगाते हैं। फिर कर्ण पाली से ऊपर सीमन्त तक कर्णफूल लगाया जाता है।

कुराक = सीमन्त के दोनों बाजू पतंग लगाया जाता है। यह जरी से सुसंस्कृत रहता है।

सीमन्त में दामिनी लगाते हैं उसको भी झाँपा कहते हैं। इस संपूर्ण भूषण समूह को झाँपा कहते हैं।

और सब भूषण अन्य रास की तरह।

रेशम फुरित = रासान्तर की तरह। रेशम फुरित के ऊपर एक गुलाबी रंग का वस्त्र, जिसका एक पल्लव पीछे जूड़े पर लगाकर फिर झाँपा लगाते हैं।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

कुमीन और पोशवान् = अन्य रास की तरह है । इस रास में खाओन नहीं पहनते हैं ।

राखाल रास की पोशाक

कृष्ण बलराम तथा अन्य गोप बालकों की उपरोक्त कृष्ण की तरह रहती है । फिर भी बलराम की हरे रंग की, मधुमंगल की गहरी लाल धोती रहती है ।

State Museum Li... Lucknow 7159

यशोदा और रोहिणी

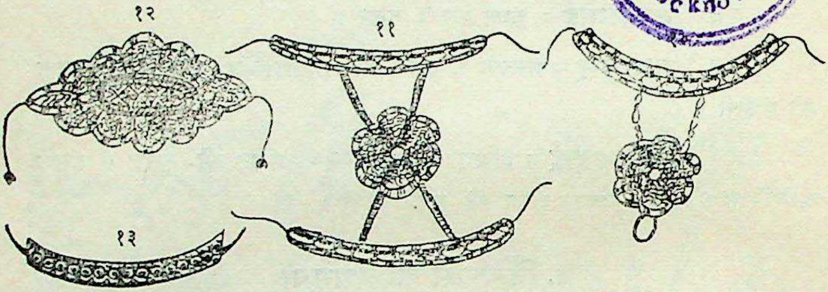

(१) **कुमीन** = अन्य रास की तरह नं० २६ ।

(२) ओढ़नी खामेनचत्पा, मस्तक के ऊपर कोक तुम्बी की तरह, मस्तक ढँक कर कमर तक पहनते हैं ।

(३) **ख्वांग्नम्** = और ख्वांगोई खामेनचत्पा के ऊपर कमर पर बाँधते हैं ।

(४) इतर भूषण अन्य रास की तरह हैं । फिर भी इस रास में कर्ण-भूषण को कुण्डलनाईन कहते हैं और हाथ में पोपचाऊवी नामक विशेष प्रकार का कंकण रहता है ।

महाराजा नन्द

(१) **चामार** = सफेद रंग का सादा घागरा कमर से पैर तक ।

(२) **वगलवंदी** = लम्बे हाथ वाला, सादा, बंद से बाँधने का अंगरखा ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America, HHFA(USA)

(३) लाल अथवा रेशमी वस्त्र को कमर में बाँधकर पल्लव लटकता रहता है।

(४) **ऋषेत् कोयेत्** = एक विशिष्ट ढंग की सफेद पगड़ी जिसका पल्लव पृष्ठ में लम्बा छोड़ते हैं।

(५) **लातिन** = केले का पत्ता। शंग्ग्रै = (विशिष्ट वनस्पति की पत्तियाँ), और रामतुलसी की पत्तियाँ गूँथकर एक कृत्रिम लता बनाते हैं, और पगड़ी से दाहिनी तरफ स्कन्ध तक लटकाते हैं।

(६) मुगा रेशम की चादर, वाम स्कन्ध से दाहिनी तरफ ग्रन्थिबन्ध से लटकाना। राजा के तरफ से पुरस्कृत नन्द का पात्र हो तो वह खामेन-चत्पा की तरह कपड़े की धोती पहनता है। हाथ में सुवर्ण वलय और सुवर्णताल (बाजूबंद) धारण करता है।

उपनन्द और सुनन्द

नन्द के अनुरूप वेषभूषा रहती है। अजमेरी कोयेत् नाम की विशिष्ट पगड़ी पहनते हैं। अंगरखा (जामा) नंद जितना बड़ा नहीं होता। लातीन भी नहीं पहनते और कटिबन्ध भी नहीं करते। कलाकार राज-पुरस्कृत होने पर भी सुवर्ण वलय के अतिरिक्त दूसरा भूषण धारण नहीं करते।

नारद

एक नामावली कमर से आगे लाकर गुणन चिह्न की तरह (×) ग्रन्थी से बाँधना। केश, दाढी और मूँछ ऋषि जैसी हो। कभी-कभी नामावली भी गेरुए रंग की होती है। हाथ में और गले में तुलसी कङ्कण और माला रहती है। दाहिने हाथ में जयमाला और बायें हाथ में तानपूरा रहता है।

बाल वासु

सर्व शरीर में विभूति रहती है। बालों को जटाकृति बाँधते हैं। मूँछ नहीं रहती, गेरुए रंग का कपड़ा, कौपीन जैसा, आधे ऊरु तक बाईं तरफ धारण कर ग्रन्थि बन्धन से रखते हैं। स्कन्ध पर झोली, बायें हाथ में कमण्डलु, दाहिने हाथ में जपमाला।

द्वारपाल

चूड़ीदार पायजामा और बगल बंदी पहनता है। मस्तक पर छोटी

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)
पगडी, उसका पल्लव पीछे से झूलता है। कटि प्रान्त में तलवार झूलती है। हाथ में ऊँचाई के अनुसार लम्बा वंशदण्ड रहता है।

ब्राह्मण पुरोहित

कच्छ विरहित सादी धोती, पीछे दोनों बाजू कच्छ जैसा लगाया हुआ पल्लवाग्र। बगलबंदी रहती है। मस्तकपर पीली छोटी पगड़ी। नामावली समेट कर कंधे पर लटकाते हैं। हाथ में एक किताब रहती है।

धेनुकासुर

मुख पर बैल का अथवा गधे का मुखौटा, लाल अथवा बैंगनी रंग का कपड़ा कच्छ युक्त पहने रहता है। एक कपड़ा कमर में बँधा रहता है।

ऊर्ध्ववाहु में और वक्ष पर रेखात्रय कृष्णवर्ण से करते हैं।

बकासुर

बाँस की फ्रेम से बड़ा बक तैयार करके ऊपर सफेद कपड़े से ढँकते हैं। चंचु का अन्तर्भाग लाल और बहिर्भाग पीला होता है। इस बक के अन्दर कलाकार प्रवेश करता है। वह चूड़ीदार सादा पैजामा पहनता है। बक की मस्तक रचना कलान्वित होने से मुख का विवरण और संवरण होता है।

सूत्रधार

सादी धोती पहनते हैं और अग्रपल्लव नीचे न छोड़कर बाईं तरफ उठाकर रखते हैं। सादे पंजावी कुरते के ऊपर चादर समेट कर रखते हैं। मस्तक पर कोयेत् शलाई नाम की विशिष्ट छोटी पगड़ी रहती है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२४. गुरुपरम्परा

प्राय: मणिपुर के लोग अपने को गन्धर्ववंश संभूत मानते हैं। क्योंकि वहाँ के लोग अधिकांश कलाकार हैं। वहाँ के लोगों का जीवन कलामय ही है। महाराज भाग्यचन्द्र से लेकर, सब राजा गुरु थे और स्वयं अनुष्ठानों में भाग भी लेते थे। धर्म, कला इत्यादि के वे अधिष्ठाता थे। उन्होंने गुरु तथा कलाकारों को प्रोत्साहन दिया। इसीलिये बङ्गदेशपाला, नटपाला, रास इत्यादि के गुरुओं की परम्परा अखण्ड प्रवृत्त रही है। यहाँ केवल रास सम्बन्धी गुरुपरम्परा का उल्लेख करते हैं।

महाराजा के श्री गोविन्दजी के मुख्य मंदिर की रासधारियों की परम्परा

महाराज भाग्यचन्द्र

- स्वरूपानन्द
  - रसानन्द शर्मा
    - थौरानी सावी शर्मा
      - कान्हाई शर्मा
        - खोमदोन शर्मा
          - अमुदोन शर्मा
          - माईस्नाम अमुवी
          - लाइश्रेम कुलविधु
            - गौरचन्द्र शर्मा
              - अमुदोन शर्मा
              - इवोपिषक शर्मा
        - वाचस्पति तवोप शर्मा
        - थांग्जम उद्धव
      - सनाथाईमा
      - अपावी सना
    - सना चन्द्रहास
  - कबो खुम्बोङ्ग्बा

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

गुरु रसानन्द, थौरानी सावी, कान्हाई, खोमदोन और उनके पुत्र अमुदोन, भाग्यचन्द्र के समय से ये सब परम्परा से एक ही वंश के रासधारी हैं।

गोविन्दजी के मंदिर के सिवाय अन्य रासधारी गुरुशिष्य परंपरा

महाराजा चन्द्रकीर्ति के समय गुरु थौरानीसावी और गुरु सना चन्द्रहास नृत्य तथा मृदंग के बहुत बड़े नामी गुरु हुए—उनकी परम्परा है।

(१)

थौरानीसावी

कान्हाई शर्मा

खोमदोन शर्मा　इबोतोन शर्मा　खुन्जाओ शर्मा　तोन्दोन सिंह (खोंग्बोक)

लोकेश्वर सिंह　इबोपिषक शर्मा　धर्म सिंह (कक्चिंग)　चाउवी शर्मा　अङ्गाहल सिंह (थोकचोम)

मुहोरी सिंह (ककचिंग्)　खोइदुम शर्मा　याईम　परीक्षित्　तोमचा　तमाल　गुलामजात

अमुदोन शर्मा　मनाउतोन　याईमा शर्मा　लालहरि　इबोमचा

विपिन　सनामचा　रासविहारी　मधुमंगल　गोपाल　देवेन्द्र　इरावन्त　सविता　निर्मला

नयना　रंजना　सुवर्णा　दर्शना　कलावती　विनोदिनी　ईबेयाईमा　जामीनी

गुणेश्वरी　थम्बालतोम्बी　शान्ति　सत्यजित्　नवघन　ननीगोपाल

(गुरु विपिन सिंह ने अमुवी, आतम्वा इत्यादि अनेक गुरुओं से सीखा है किन्तु मुख्यतः अमुदोन की परम्परा का अनुसरण करते हैं)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सना चन्द्रहास

नोंग्याई, नोङ्गाल (दो भाई)

कोनसम चूडासिंह

माईस्नाम अमुबी — चिंग्शुबम ईबेतोन

सूर्यंवरसना, सनाहल राजकुमार, निंग्थौ, चाउतोनसना, कालिदमन, अहन्जाउ

राजकुमार प्रियगोपालसना, श्रीमती ठाकुर, दानीसना राजकुमार, निनिसना (हेमलता)

बाबू सिंह, सिंहजित (राजकुमार), तरुणकुमार, पूर्णचन्द्र, अमला, नदिया सिंह

महावीर सिंह, मीनाक्षी, नवचन्द्र सिंह, तोम्बीनो

सूर्यमुखी, टंडन, थम्बाल अङ्गौबी, इबेतोम्बी

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

हुइद्रोम रुद्र सिंह (गुरु हाउबम तोम्बा का मामा)

हाउवम तोम्बा

कैशाम तोम्पोक, शरोत्खाईवम पाका, कैशाम रसमन, ङ्ङ्मो गोपाल,

वापू शर्मा, शोराम अंगौ, चांदी सिंह, रा. कु. सनारिक, लीलीदेवी,

रीतादेवी, चमेली, अंगौ तोम्बी, अनन्त सिंह, बिहारी, लैशांग्थेम तेजमणि–

(वर्तमान में मणिपुर में तीन नामवंत गुरु अमुदोन शर्मा, माइसनाम अमुवी, हाउवम तोम्बा हो गये । उनकी परम्परा ऊपर बताई गई है)

नर्तन रासकी गुरु-परंपरा

माईबम कैफा

हुइद्रोम झुलनमचा सिंह

खोंग्लेन कुलविधु माइस्नाम अमुबी हाउबम तोम्बा चबुंग्बम लैरेन

बाबूयाईमा शर्मा खेत्रीतोम्बी देवी

(खेत्रीतोम्बी देवी अन्य विभिन्न गुरुओं से सब रास सीखी हैं। वे स्वयं श्रेष्ठ नर्तकी, गायिका हैं। वर्तमान में श्रेष्ठ गुरुओं में से एक हैं।)

'एकगोपी एकश्याम' (गोपी गोपाल रास) के गुरु

निङ्गोन्बम गोविन्द, वांग्जम अमु, निङ्गोन्बम अमु, निङ्गोन्बम इवोमचासिंह।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

ऊपर लिखे हुए गुरुओं में जो परम्परा अन्तर्गत नहीं हुए ऐसे नृत्य के नामी गुरु—

(१) मोईरांग्थेम फूलसिंह
- रामसिंह
- तोल्लमु शर्मा
  - नित्याईचांद शर्मा

(२) लाईयुम मुरु शर्मा वांग्खै
- पुजारीहन
  - वामन इशैहन्बा

'थोकचोम् मरैबा' चन्द्रकीर्ति महाराजा के समय नृत्य गीत में बहुत प्रख्यात गुरु हुए—उन की परम्परा—

थोकचोम् मरैबा
- थोकचोम जादव
  - थोकचोम मुक्ता
    - थोकचोम अङ्गाहन
      - गौरचन्द्र शर्मा
      - कोनसम अङ्गाहन
      - काङ्गबम नात्र
      - निङ्गोन्बम चाउबा
        - बापू शर्मा
        - अमुसना राजकुमार
        - कोडातोम्बी
          - तमालसना
          - ईवोमचा
          - ठागुधन शर्मा
          - ङङोम तोम्पोक
          - तोल्लङ्गो
            - मधुमङ्गल
            - तोम्बा शर्मा
            - कान्हाई
            - सनामचा
            - पाका

गोपरास की गुरुपरम्परा

गोपरास भाग्यचन्द्र महाराज के समय से आया। किन्तु गुरु परम्परा राजा गम्भीर सिंह के समय से अब तक की ही मिलती है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

सना समीरांग

- लैवाकमचा सिंह
  - सनाचन्द्रहास
  - माईबम कैफा
    - झुलन मचा
      - खोंग्लेन शेलुंग्बा
        - हाउबम इबोयाईमा
        - निंग्थौजम थम्बौ
          - हुईरेमलाला
          - तोम्पोक सिंह
        - लाईश्रम कुलविधु
      - रेवती ठाकुर
    - तोलेनमचा शेंग्लुंग्बा
    - चकप्रम तमाल
    - थांग्जम उद्धव
    - सलाम-चाउबा
    - याइमजाओ
  - अयेकपम चगेमतोन
  - मेरीशेलुंग्बा

टिप्पणी—श्री सुराचान्द शर्मा लिखित 'मैतेई जगोई' भाग ४, पृष्ठ ४० से ४६ मेंसे कुछ गुरु तथा कलाकारों का नामोल्लेख किया है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२९. मणिपुरी रासनर्तन के कुछ गुरु

(१) **गुरु अमुबीसिंह**—मणिपुर के मुख्य नृत्य गुरुओं में ये सबसे बड़े थे। ख्रिस्ताब्द १८८१ में इनका जन्म हुआ। बाल्यकाल से ही इन्होंने अनेक नृत्य गुरुओं से रासनृत्य की शिक्षा ली। इनके जीवन का अधिक समय मणिपुर के बाहर ही व्यतीत हुआ। कलकत्ता में, अहमदाबाद में और श्री उदयशंकर के साथ अलमोड़े में ये नृत्याध्यापन करते थे। फिर कुछ दिन दिल्ली में ही रहे। अभिनय में इनकी बहुत चातुरी थी। अभिनय के विषय में इन्होंने नये-नये आविष्कार किये। इससे वे अमर हो गये। १९५६ में ये संगीत नाटक अकादमी से सम्मानित हुए।

सन् १९५४ से दीर्घकाल तक 'जवाहरलाल नेहरू मणिपुरी डान्स अकादमी में ज्येष्ठ गुरु का सम्मानित पद अलङ्कृत किया। उत्तर जीवन में विजिटिंग प्रोफेसर रहे। १९७२ में इनकी जीवन यात्रा समाप्त हुई।

(२) **गुरु अमुदोनशर्मा**—ये मणिपुर के राजवंश के अन्तिम गुरु थे। ख्रिस्ताब्द १८८६ में इनका जन्म हुआ। नटपाला और रासनृत्य, इनमें इनका असाधारण नैपुण्य था। नृत्यशिक्षण में वैज्ञानिक पद्धति का अवलम्वन करने के ये पक्षपाती थे। उनकी ताण्डव तथा लास्य की परम्परा वैशिष्ट्य पूर्ण और नानाविध थी। नटपाला का अत्यधिक ज्ञान होने से ताल और बोल में इनकी अप्रतिहत गति थी। इन सब विशेषताओं का परिणाम यह हुआ कि उनकी बनाई हुई कृतियाँ हृदयङ्गम बनी थीं। मणिपुर के बाहर ये प्रायः नहीं गये। कलकत्ता, दिल्ली और बम्बई में कुछ समय व्यतीत किया था। १९६० में 'संगीत नाटक अकादमी की तरफ से पुरस्कार प्राप्त हुआ। कुछ दिन के लिये मणिपुर के 'जवाहरलाल नेहरू मणिपुरी डान्स अकादमी' में गुरु का पद अलंकृत किया। १९७४ में इहलोक की यात्रा समाप्त की।

(३) **गुरु आतम्बासिंह**—नृत्य में इन्होंने अपने वैशिष्टच का और सौन्दर्य का आश्चर्यकारक आविष्कार करके परम्परा का रक्षण किया।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मणिपुर के नर्तन के विषय में ये गुरु अजरामर हो गये। खिस्ताब्द १८८५ में इनका जन्म हुआ। नित्यरास इनका वैशिष्टय पूर्ण विषय था। नृतप्रबन्ध की रचना में इनकी प्रतिभा का तेज देखने को मिलता है। कुछ-कुछ विषयों में ये बहुत रूढिचुस्त थे। नर्तनधारा का प्रचार करने के लिये वे शान्तिनिकेतन, शिलोंग, कलकत्ता रहे। इनको शान्ति निकेतन के तरफ से स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ था।

१९५८ में संगीत नाटक अकादमी से पुरस्कार प्राप्त हुआ। जवाहरलाल नेहरू डान्स अकादमी में १६ साल तक गुरु पद अलंकृत किया। १९६९ से वहीं विजिटिंग प्रोफेसर रहे। १९७३ में मणिपुर स्टेट कला अकादमी की तरफ से फैलोशिप का सम्मान मिला। १९७५ में इनका देहावसान हुआ।

(४) **गुरु नवकुमारसिंह**—ये त्रिपुरा के निवासी थे। इनको १९२६ में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुरजी ने अपने शान्तिनिकेतन में स्थायी शिक्षक के रूप में नियुक्त किया। मणिपुर के बाहर बङ्गाल, अहमदाबाद और बम्बई में इन्होंने मणिपुर के नर्तन का प्रचार किया।

(५) **गुरु सेनारिक राजकुमार**—१८७५ में इनका जन्म हुआ। काछाड़ निवासी गुरु १९३४ में शान्तिनिकेतन, विश्वभारती में आये। इन्होंने कलकत्ता में भी इस नृत्य सम्प्रदाय का प्रचार किया। काछाड़ जिले के मणिपुरी गुरुओं में ये ख्यातनाम हैं।

(६) **गुरु पाकासिंह**—मणिपुर के ख्यात नाम गुरुओं में से एक हैं। १९०१ में इनका जन्म हुआ। वे शान्तिनिकेतन में तथा पटना के भारतीय नृत्य कलामन्दिर में दीर्घकाल तक अध्यापक थे। पटना और शान्ति निकेतन जाने के पहले मणिपुर में रासधारी के रूप में ये अति लोकप्रिय थे। वर्तमान में ये 'जवाहरलाल नेहरू मणिपुरी डान्स अकादमी' में स्नातकोत्तर श्रेणी के विजिटिंग गुरु हैं। इन्होंने कुछ तालों के आधार पर रचनाएँ की हैं।

(७) **सूत्रधारिणी क्षेत्री तोम्बी देवी**—१९०५ में इस प्रतिभाशालिनी कलाकार का जन्म हुआ। यौवनावस्था में अतिकुशल नृत्यविधायिनी रहीं। यह मणिपुर राजा के तरफ से विशेष प्रसंगों में कलकत्ता में तथा अन्यत्र नृत्य प्रदर्शन करने वाली प्रथम नर्तिका हैं। परम्परागत रासनृत्य और अभिनय के लिये विशेषज्ञ रूप में इनका सम्मान मणिपुर के लोग करते हैं। राजपरिवार के जो बहुज्ञ गुरु थे, उनसे शिक्षा ग्रहण का सुयोग इनको

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

मिला और इसी से इनका ज्ञान भण्डार समृद्ध हुआ। सूत्रधारिणी के रूप में भी ये सर्व प्रसिद्ध हुईं। अभी तक ये गुरु विपिन सिंह द्वारा प्रतिष्ठापित मणिपुरी नर्तनालय में गुरुपद पर अधिष्ठित थीं।

वर्तमान में श्री श्री गोविन्दजी नर्तनालय में प्रधानाचार्य हैं।

बम्बई में अनेक बार झवेरी भगिनियों के संनिधान में आकर नृत्य प्रदर्शन किया और संशोधन कार्यादि में भी सहायता दी। खास कर प्राचीन अभिनयादि का प्रदर्शन किया।

मणिपुर स्टेट कला अकादमी तथा मणिपुर साहित्य परिषद से इन्होंने पुरस्कार प्राप्त किया।

संगीत नाटक अकादमी की तरफ से भी ये पुरस्कृत हुईं।

(८) **गुरु लोकेश्वरसिंह**—ये बाल्य काल से ही मृदङ्ग वादक एवं नर्तन कार के रूप में परिचित थे।

इनका जन्म १९०९ में हुआ। इनके पिता विख्यात मृदङ्ग वादक थे। उनसे ही इन्होंने प्रथम शिक्षा ग्रहण की। इनके नृत्यगुरु ईबोतलशर्मा थे। नटपाला में वे स्वयं मृदङ्ग वादक और रास नृत्य में पटुतम रासधारी थे। रासनृत्य में इन्होंने कुछ नृत्य रचनाएँ की हैं। प्रथय वे मणिपुर के नृत्याश्रम और श्री गोविन्दजी नर्तनालय में, दिल्ली के त्रिवेणी कला संगम में कुछ समय तक गुरु थे। वर्तमान में जवाहरलाल नेहरू मणिपुरी डान्स अकादमी में रास के प्रधान शिक्षकपद पर नियुक्त हैं। और गोविन्दजी के मन्दिर में मृदङ्ग वादक के रूप में सेनापाला हंजावा रहे हैं।

(९) **गुरु इबोपिषक् शर्मा**—खिस्ताब्द १९१६ में इनका जन्म हुआ। इनके पिता इबोतलशर्मा (ङ-क्राबा) सुप्रसिद्ध रासधारी थे। इनका प्रथम शिक्षण पिता के पास ही हुआ। बचपन से ही इन्होंने रासनृत्य में विशाल कीर्ति संपादित की। कुछ समय तक गोविन्दजी के मन्दिर में रास के रासधारी रहे हैं। वे अति लोकप्रिय हैं। रास शिक्षक के रूप में ये सर्वप्रिय हैं। कुछ समय तक ये श्री गोविन्दजी नर्तनालय के प्रधान अध्यक्ष थे। और अभी जवाहरलाल नेहरू डान्स अकादमी में रास नृत्य के शिक्षक हैं। कलकत्ता, अहमदाबाद इत्यादि शहरों में शिक्षक के रूप में कार्यरत थे और नृत्यप्रदर्शन भी किया था।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

(१०) **गुरु बिपिन सिंह**—मणिपुरी नृत्य जगत् में जो-जो गुरु अपनी विशेषता से ख्यातनाम हुए, उनमें से ये एक हैं। सन् १९१८ में काछाड़ जिले के सिंगारी ग्राम में जन्म हुआ। इनके पितामह तोनासिंह मणिपुर के ङाइखोंग खुंजाव ग्राम से आकर काछाड़ जिले के सिंगारी ग्राम में वसे। शैशव से ही मणिपुरी गुरुओं के पास कठोर शिक्षा साधन से इन्होंने ज्ञानभण्डार वर्धित किया। फिर भी गुरु अमुदोन शर्मा की शैली को प्राधान्य दिया है।

गत तीस साल से मणिपुर की विभिन्न नृत्य धारा तथा संगीत के विषय में नाना पर्यवेक्षण और सूक्ष्मेक्षण द्वारा गवेषणा की है। शास्त्र में तथा साहित्य में निपुण होने के बाद शिक्षण को परिमार्जित स्वरूप में सुव्यवस्थित किया। तथा स्वयं अन्वेषित नृत्यादि रचना, हृदयस्पर्शी और अनितर साधारण स्वरूप में प्रकट किया। वर्तमान युग के अनुसार वैज्ञानिक शिक्षा पद्धति को उन्होंने अग्रसर किया। खंडाला में मैदम मेनका की संस्था में शिक्षक थे। १९४३ से वम्बई और मणिपुर में शिक्षा और प्रचार कार्य का आरम्भ किया। वर्तमान में कलकत्ता, वम्बई और मणिपुर में 'मणिपुरी नर्तनालय' नामक संस्थाएँ झवेरी बहनों के सहकार्य से स्थापित की। इनकी शिष्य परम्परा वड़ी है। १९५९ में मणिपुर महाराजा की तरफ से इन्होंने नर्तनाचार्य उपाधि प्राप्त की। १९६१ में सर्वोत्तम उपाधि हञ्जाबा से सुशोभित हुए। १९६५ में संगीत नाटक अकादमी की तरफ से पुरस्कृत हुए। इनकी नृत्यशैली में नैसर्गिक धारा प्रवाह का आविष्कार हुआ। संपूर्ण भारतवर्ष में, और विदेश में मणिपुरी नृत्य का प्रदर्शन और प्रचार किया।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२३. मणिपुरी नृत्यगीत सम्बन्धी सहायक ग्रन्थ-सूची

मैतेई भाषा में प्राचीन पुराण

१. लैथाक लैखा रॉल
२. लैसेम लोल
३. पुदीन

प्राचीन मैतेई पुराण है—सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन है

४. पान्थोइ्बी खोंगुलोल—नोंग्पोक निंग्थौ पान्थोइबी और लाई हरावबा के मूल स्वरुप का उल्लेख।

५. मैतेई जगोई (अनोई रोल) पहला भाग—श्री खुमल्लन्बम याईमा सिंह (लाई हरावबा नर्तन संबंधी)

इतिहास सम्बन्धी

१. चैथारॉल कुम्बावा—(मैतेई) राजाओं की वंशावली और कार्यवाही (Royal Chronicle)

२. मणिपुर इतिहास मैतेई पुराण विजय पंचाली—(५ खण्ड) (बांगला) श्री कीर्तिचन्द्र कृत।

चन्द्रकीर्ति महाराज के समय कवि कीर्तिचन्द्र ने द्विज सीताराम के साथ विचार करके मैतेई पुराण से बांगला भाषा पयारछन्द में लिखा—

मैतेई अनुवाद और संपादन—एल० मंगी सिंह, एल० मणिसिंह

प्रथम खण्ड—गरीब नवाज चरित

द्वितीय खण्ड—भाग्यचन्द्र महाराज चरित

तृतीय खण्ड—गंभीर सिंह नरसिंह महाराज का चरित

चतुर्थ खण्ड—चन्द्रकीर्ति महाराज का चरित

पंचम खण्ड—युवराज कोईरेन, मेजर थांगल, और पाउना व्रजवासी का चरित

३. विजय पंचाली—(मैतेई-अंग्रेजी) मुतुम झुलन सिंह कृत

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

४. Introduction to Manipur—by L. Ibungohal Singh
५. History of Manipur—by Jyotirmoy Roy
६. मणिपुर इतिहास (मैतेई)—आर० के० सनाहल सिंह
७. मणिपुर इतिहास (मैतेई)—चन्द्रमणि सिंह
८. Glimpses of Manipuri Literature and Culture, published by Manipuri Sahitya Parishad, Imphal.
९. Background of Assamese Culture by R. M. Nath (One chapter on History of Manipur)
१०. अरीबा मणिपुर साहित्यगी इतिहास (मैतेई)—पं० खेलचन्द्र सिंह

नर्तन सम्बन्धी

१. मैतेई लाई हराववा (मैतेई)—पं० कुलचन्द्र सिंह
२. मैतेई जगोई (१ से ११ भाग) (मैतेई)—श्री सुराचान्द शर्मा
३. मैतेई जगोई (मतैई)—गुरु अमुबी सिंह
४. रास शैरेंग (मैतेई)—गुरु आतम्बा सिंह
५. मणिपुरी रास (मैतेई)—पं० आतम्बापु शर्मा
६. श्री श्री हरि संकीर्तन (मैतेई)—के० धन सिंह
७. मैतेई कीर्तन (मैतेई) पं० आतम्बापु शर्मा
८. मणिपुरी रास (मैतेई)—गुरु ख० लोकेश्वर सिंह
९. Manipuri Dance Issue (English)—Marg Publication 1961.

प्राचीन बांगला पदावली साहित्य

(राधाकृष्ण के रास तथा अन्य प्रसंग संवंधी)

१. क्षणदा गीत चिन्तामणि—विश्वनाथ चकवर्ती (पदावली संग्रह की पहली पुस्तक)
२. पदकल्पतरु (चार भाग) वैष्णवदास। नित्यरास—'देखत वेकल गौरचन्द्र' १०६५ संख्या के पद से 'चललहि मन्दिरे नवल किशोरी' १०९३ संख्या के पद तक।
महारास—'वृन्दावनलीला गौरार मनेते पडिल' १२५५ संख्या के पद से 'वड़ अपरूप देखिनु सजनी' १३०४ संख्या के पद तक।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)
वासन्तीरास—'नवद्विपे उदय करिला द्विजराज' १४६६ संख्या के पद से 'नवल किशोर नवल नागरिया' १५२६ संख्या के पद पर्यन्त ।

३. पदामृतसमुद्र—राधामोहन ठाकुर पृष्ठ २१४ से पृष्ठ २२६ पर्यन्त २६ पद रास में गाते हैं ।

४. पदामृतमाधुरी—खगेन्द्रनाथमित्र और नवद्वीपचन्द्र व्रजवासी । महारास= तृतीय खण्ड पृष्ठ ४६० 'वृन्दावनलीला गौरार मनेते पडिल' से पृष्ठ ५७२ तक वासन्तीरास = तृतीय खण्ड पृष्ठ ६२५ से ६५५ तक ।

५. कीर्तनगीतरत्नावली—कैलाशनाथ, महारास पृष्ठ १४८ 'देख देख गौरवर रसराज से देखरि इह रासरंग तक, पृष्ठ १५१ । नर्तक रास 'गौरांग = प्रेमेर ढल.........' से 'किवा से राधार रूप' पृष्ठ १७३ तक ।

६. लीलागानपद्धति—राखालरास चक्रवर्ती । नित्यरास पृष्ठ १२१ 'रास रंगस्थल परम.........' पृष्ठ १२२ तक । महारास पृष्ठ २८२ 'सोङरि पूरब लीला' से पृष्ठ २६३ तक ।
वासन्तीरास—पृष्ठ ३१६ 'मधुऋतु जामिनी' से पृष्ठ ३२२ तक ।

७. रस हुम्फुमरी—महाराजा चन्द्रकीर्ति के समय संग्रह किया हुआ ग्रन्थ । मणिपुर में उपलब्ध विप्रलंभ तथा संभोग के ६४ भेद की पदावली, मैतेई अनुवादक एवं संपादक—श्री सुराचान्द शर्मा ।

संस्कृत वैष्णव पदावली (रासलीला सम्बन्धी)

१. गीतगोविन्द—कवि जयदेव ।
२. संगीतमाधव—प्रभुदानन्द सरस्वती ।
३. राधागोविन्द काव्य—राधानन्ददेव ।
४. गीतावली पद्यावली—श्री रूपगोस्वामी ।

वैष्णव साहित्य (रासलीला सम्बन्धी)

१. गोविन्दलीलामृतम्—कृष्णदास कविराज । राधाकृष्ण की अष्टकालीन प्रवृत्ति का वर्णन है । इसके २२ और २३ सर्ग में रास में प्रयुक्त नृत्यगीतवाद्य का शास्त्रीय वर्णन है ।
संस्कृत भाषा में श्लोक रूप में लिखा है ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

२. आनन्दवृन्दावनचम्पु—कवि कर्णपूर । २० वाँ स्तवक 'रासविलास' नामक संस्कृत में लिखा है—रास में प्रयुक्त नर्तन गीत का वर्णन है ।

३. अलंकार कौस्तुभ—कवि कर्णपूर १०।४४, ८५ संस्कृत में रास सम्बन्धी संक्षेप में वर्णन ।

४. कृष्णभावनामृतम्—विश्वनाथ चक्रवर्ती । अध्याय १९-२० में नृत्यगीतादि का वर्णन संस्कृत में है ।

५. भक्तिरत्नाकर—नरहरि चक्रवर्ती । पंचम तरंग में रास में प्रयुक्त नृत्य, गीत, वाद्य का शास्त्रीय विवेचन सुन्दर रीति से विस्तार पूर्वक किया है । संस्कृत श्लोक, संस्कृत टीका, बांगला अनुवाद और उदाहरण के लिये पदावली भी दिया है ।

६. गोपालचम्पू—जीवगोस्वामी । पूर्वचम्पू २६-२७ पूरण में रास का संस्कृत भाषा में वर्णन है ।

७. आश्चर्यरासप्रबन्ध—प्रभुदानन्द सरस्वती ।

८. स्तवमाला (संस्कृत)—रूपगोस्वामी ।

९. लीलास्तव (संस्कृत)—सनातन गोस्वामी ।

१०. गौडीय वैष्णव अभिधान—श्री हरिदास दास कर्तृक संकलित । गौडीय वैष्णव धर्म सम्बन्धी नृत्य, गीत, वाद्य, साहित्य इत्यादि सब विषयों का कोष है ।

वैष्णव साहित्य (रस सम्बन्धी)

१. भक्तिरसामृतसिन्धु (संस्कृत)—रूपगोस्वामी ।

२. उज्जवलनीलमणि (संस्कृत)—रूपगोस्वामी । रस, नायक, नायिका का विचार ।

३. रसकल्पवली (संस्कृत, बांगला)—रामगोपाल दास । शृङ्गार रस का विस्तार पूर्वक वर्णन ।

४. रसमंजरी (संस्कृत, बांगला)—पीताम्बर दास । अष्टनायिका के ६४ प्रकार ।

५. नायिकारत्नमाला (संस्कृत, बांगला)—चन्द्रशेखर और सतीशशेखर । अष्ठ नायिका के ६४ प्रकार का वर्णन ।

६. राधाकृष्णगणोद्देश दीपिका (संस्कृत)—रूपगोस्वामी । राधा, कृष्ण, सखा, सखी वगैरह की वेशभूषा, वयस् इत्यादि का वर्णन ।

७. पदावली परिचय (बाँगला)—डॉ हरेकृष्ण मुखोपाध्याय ।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वैष्णव संगीत शास्त्र

(मणिपुर में उपलब्ध)

१. गोविन्दसंगीतलीलाविलास (संस्कृत)—राजर्षि भाग्यचन्द्र कृत १८ वीं सदी।

इसके नर्तनाध्याय और तालाध्यय दो ही उपलब्ध हैं।

इसके विषय—नर्तन प्रवृत्ति परम्परा, नर्तन लक्षण, अभिनय लक्षण, रसलक्षण, सभासन्निवेश, नर्तनाचार्य लक्षण, नट, नर्तक, बैतालिक, चारण, कोल्हाटी, नटकीर्तक, इनके लक्षण, अभिनय भेद, नाट्य, नृत्य, नृत्त, मार्ग, देशी लक्षण, नृत्य नृत्तविभाग, नाट्य विभाग, रूपक, रासक, अंगोपाङ्ग भेद, स्थानक भेद, चारी, गतिभंग, भ्रमरी भेद, चालीनृत्त, भङ्गावलि, नृत्तबन्ध, नृत्तप्रबन्ध, नृत्यबन्ध, नृत्यप्रबन्ध, अंगहार, नृत्यविशेष, गति भेद, यतबन्ध, चित्रबन्ध, मिथोबन्ध।

परिशिष्ट में—हल्लीसक, रास, छालिक्य, तिरीप, चर्चरी, प्रतानिका।

ताल—तालप्राण, मार्गताल, देशीताल।

२. श्री कृष्णरससंगीत संग्रह (संस्कृत)—राजा गम्भीरसिंह के आदेशानुसार १८३० में लिखा गया—ग्रन्थ में लेखक का नाम नहीं मिलता। कोई कोई इस ग्रन्थ की फलश्रुति में 'भक्तिसिद्धान्तविद्' ऐसा विशेषण देखकर लेखक का नाम भी इसमें श्लिष्ट है ऐसा मानते हैं। लेकिन भक्ति सिद्धान्त नाम अप्रसिद्ध है इसलिये ऐसी क्लिष्ट कल्पना असंगत है।

इसके सात प्रकरण हैं।

इनके विषय—संगीत घटक, संगीत प्रकार, नादमाहात्म्य, नादोत्पत्ति, संगीतज्ञानपालम्, प्राणादि वर्णन संगीतगुरु परम्परा, संगीतोत्पत्ति, प्रयोजनस्वरूप, गीतलक्षण, गायक लक्षण, गायक-दूषण, स्वरव्याख्या और स्वरूप, श्रुति, ग्राम, मूर्च्छना, ताननिरूपण, वर्णलक्षण, जाति, राग, रागरागिणी ध्यान, ताल, दशप्राण, नाट्य, नृत्यनृत्तहस्त,

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

वाग्गेयकार लक्षण, वाद्यनिरूपण, गीत भेद, प्रबन्ध, धातु, अंग, जाति, कायवाल, तालप्रयोग, गीतप्रकार, गीतगुण, नायिका भेद, शृङ्गार भेद, कुञ्जरास, वसन्तदिवारास, निशावसन्तरास, झूलन रास, रास लीला गुण वर्णन है।

३. संगीतामृतसार—(संस्कृत) लेखक अज्ञात। नृत्य, गीत, वाद्य इत्यादि सम्बन्धी।

४. मृदंग व्यवस्था संगीत—(मैतेई) स्व० श्री थोकचोम मनाउ सिंह। (ताल सम्बन्धी)

५. मृदंग संग्रह—(मैतेई) संपादक—आर० के० रतनसना सिंह। (ताल सम्बन्धी)

६. रागरत्नाकर—(मूल संस्कृत) घनश्यामदास नरहरि चक्रवर्ती कृत। (सिर्फ मणिपुर में ही प्राप्त है—श्री सुराचान्द शर्मा ने सम्पादित कर मैतेई भाषा में अनुवाद किया है) रागों की मूर्ति और ध्यान का वर्णन है।

७. संगीतसारसंग्रह—(मूल संस्कृत) नरहरि चक्रवर्ती (घनश्यामदास कृत) (बंगला लिपि में—श्री सुराचान्द शर्मा ने संपादित कर मैतेई भाषा में अनुवाद किया है)

(देवनागरी लिपि में—स्वामी प्रज्ञानन्द ने संपादित किया है) गीत, वाद्य, नृत्य, नाटच, आंङ्गिकाभिनय के प्रकरण हैं।

८. संगीत दामोदर—(संस्कृत) पं० शुभङ्कर। मणिपुर में खण्डित रूप में मिलता है। राग, रागिनी, ताल, वाद्य, नृत्य का शास्त्रीय वर्णन। संपूर्ण पुस्तक का सम्पादन—गौरीनाथ शास्त्री, और गोविन्दगोपाल मुखोपाध्याय ने किया है। प्रकाशक-संस्कृत कॉलेज कलकत्ता।

९. गीत चन्द्रोदय—(संस्कृत-वांगला) नरहरि चक्रवर्ती (घनश्यामदास)

यह पदावली संग्रह रूप पुस्तक है। इसके अष्टम परिच्छेद में गीत, वाद्य, तालों का विवेचन है। ताल का विस्तार पूर्वक संस्कृत में वर्णन 'तालार्णव' नाम के अधीन किया है।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

१०. नाटक चन्द्रिका—(संस्कृत) रूपगोस्वामी। राधाकृष्ण का उदाहरण देकर नाटच के सम्बन्ध में विस्तार पूर्वक वर्णन है।

११, कीर्तन चिन्तामणि—(संस्कृत) रघुनाथ भट्ट। नटपाला (संकीर्तन) का विचार।

१२. कीर्तन विचार
१३. तत्त्व प्रकाश
} नटपाला के सम्बन्ध में श्री हरि संकीर्तन ग्रंथ में गुरु धन ने उल्लेख किया है।

पुराण

श्रीमद्‌भागवत।
विष्णु पुराण।
पद्मपुराण इत्यादि।
चैतन्यचरितामृत—कृष्णदास कविराज।
चैतन्य भागवत्।

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो० बी० एन० पुरी
संग्रह
लखनऊ

State Museum Library
7159
Lucknow

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)

Digitization by Hindu-Heritage-Foundation of America. HHFA(USA)